सत्यध्वज

वर्ष - 16
अंक - 48

गुरूघासीदास एवं उनके सतनाम आन्दोलन पर आधारित
एकमात्र अनियतकालीन हिन्दी पुस्तक

अप्रैल, मई, जून 2005
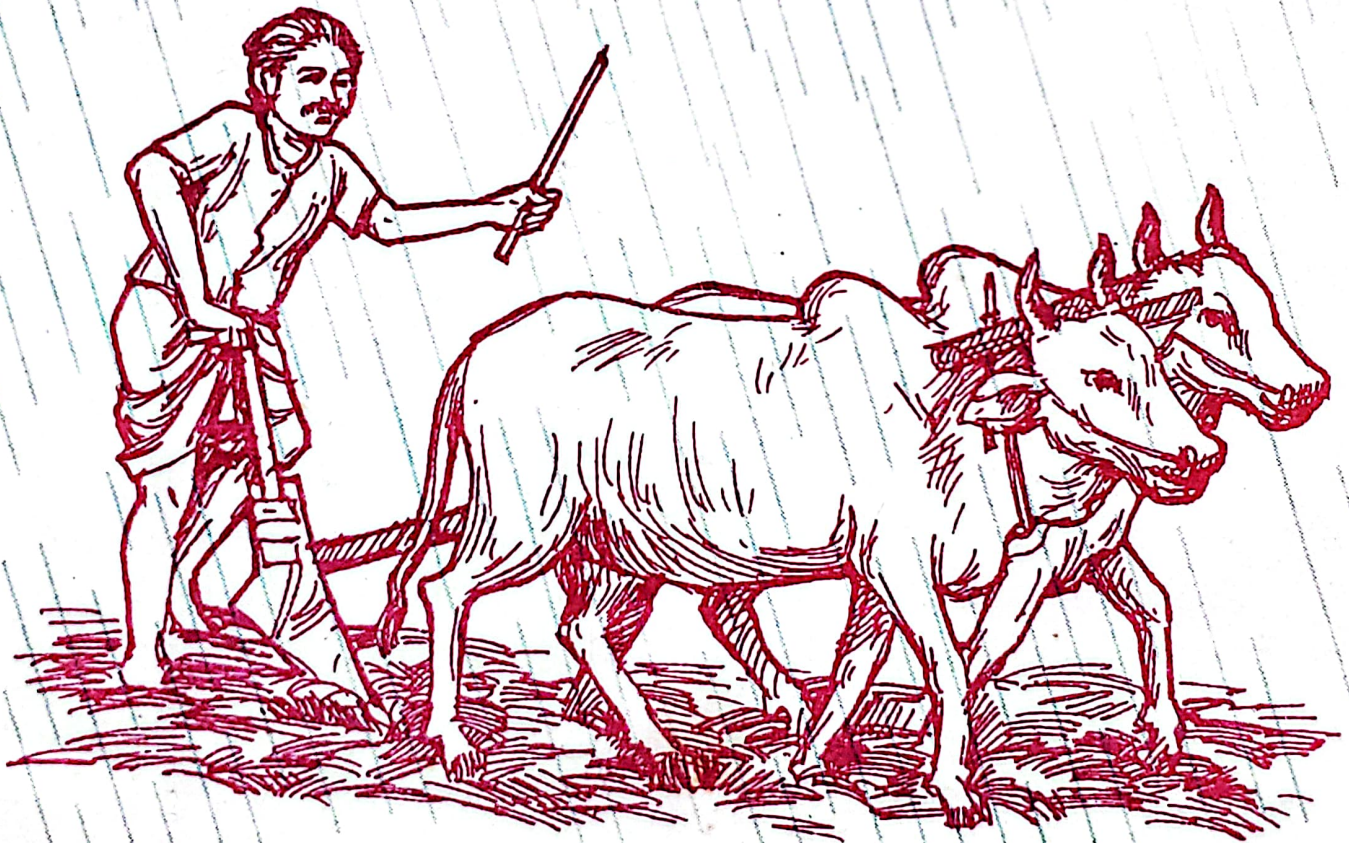
। जय सतनाम । दोपहर में खेत मत जोतो । जय सतनाम ।

सम्पादक
दादूलाल जोशी 'फरहद'

सहयोग राशि
25 रूपये मात्र

प्रतिनिधि को पत्र

प्रिय भाई कोमल गायकवार, ग्राम :- फरहद

जय सतनाम ! दिनांक :- 30 मई 2005

आशा है तुम सपरिवार स्वस्थ, प्रसन्न होगे। तुम्हारे सभी पत्र मुझे समय पर मिल जाते हैं। पत्रों से ही तुम्हारी गतिविधियों की जानकारी मिलती है। मुझे बहुत अच्छा लगता है; तुम्हारे प्रयासों को जानकर। भोपाल शहर में सत्यध्वज के बीस वार्षिक सदस्य बनाकर नियमित वितरण और सहयोग राशि संकलन का कार्य कर रहे हो। मैं समझ सकता हूं कि तुम्हें इस कार्य में कितनी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता होगा। इसके लिए तुम्हें कई बार सदस्यों के पास समय निकाल कर जाना पड़ता होगा। आवागमन में अपने पैसे भी खर्च करने पड़ते होंगे।

गुरू घासीदास, सतनामी समाज और सतनाम साहित्य के प्रति तुम्हारे दिल में जो निष्ठा है; वह प्रशंसनीय है और जो सेवाभाव है; वह सबके लिए अनुकरणीय है।

यह गर्व की बात है कि तुम गुरू बाबा घासीदास जी के सिद्धांत का पूर्ण आस्था के साथ पालन कर रहे हो। वर्जित पदार्थों का भक्षण तो दूर उनका तुम स्पर्श भी नहीं करते हो। अपने भोजन में प्याज-लहसून का उपयोग भी नहीं करते हो। वास्तव में तुम गुरू बाबा के सच्चे अनुयायी हो। परम् भक्त हो। राजधानी भोपाल में सत्यध्वज का निःस्वार्थ प्रचार-प्रसार कर रहे हो। इसका मैं कायल हूं ही। तुम्हारे आचार-विचार की जितनी भी तारीफ करूं वह कम है।

प्रिय भाई ! हमें इस वर्ष बहुत काम करना है। हम सब बहुत अच्छे और सार्थक काम में लगे हुए हैं। हमें मालूम है कि हमारे कार्यों का उचित मूल्यांकन हमारे समय में नहीं होगा। हमारे काम में सहयोगी कम और विरोधी अधिक हो सकते हैं। लेकिन हमें निराश नहीं होना है। हताश नहीं होना है। हमें मूल्यांकन की बिलकुल चिन्ता नहीं है। किसी तरह के सम्मान और पुरस्कार की आकांक्षा नहीं है। हमारे कार्यों से समाज में किसी तरह की क्रांति आ जायेगी; ऐसा कोई स्वप्न भी नहीं है। हम इस सच्चाई को स्वीकार करते हैं कि तुम और हम सभी साथी बेहद साधारण लोग हैं। हमें नेता बनने की, मार्गदर्शक बनने की संत-महात्मा, गुरू या महंत आदि बनने की अभिलाषा नहीं है। दरअसल हम लोग तो गुरू बाबा के द्वारा प्रदत्त चेतना, बुद्धि और ज्ञान का अपने समय में यत्किञ्चित उपयोग कर रहे

- शेषभाग पेज-33 पर (कव्हर में)

Anant1984

सत्यध्वज

गुरूघासीदास एवं उनके सतनाम आन्दोलन पर आधारित
एकमात्र अनियतकालीन हिन्दी पुस्तक

अप्रैल, मई, जून - 2005

वर्ष-16 अंक-48

-: इस अंक में :-

1. अपनी जिम्मेदारी भी तो समझे। सम्पादकीय - दादूलाल जोशी 'फरहद'
2. पाठको के पत्र
3. सतनाम के प्रचार हेतु विस्तृत यात्राएँ (1830-1840) - डॉ. हीरालाल शुक्ल
4. अमर कथाएँ
किसी को दुःख देना ही पाप हैं - डॉ. जे. आर. सोनी
5. अनमोल विचार - संकलित
6. गुरूघासीदास की अमृत वाणियाँ
''सोवै तौन खोवै, जागै तौन पावै'' - भाऊराम घृतलहरे
7. अंतर्दृष्टि - जे. एल. चन्द्राकर
8. '' बाबा गुरू घासीदास के अनमोल वचन'' - पुरानिक लाल चेलक
9. जंगल में मंगल, संसार - बूलनदास
10. गुरूघासीदासजी का चिकित्सा विधान - दादूलाल जोशी ''फरहद''
11. गुरूघासीदास के अनुयायी ही सच्चा सतनामी - विष्णु प्रसाद बंजारे
12. महान समाज सेवक स्व. श्री मूलचंद जांगड़े जी - डॉ. भूषण जांगड़े

दादूलाल जोशी ''फरहद'' मु. फरहद; पो. सोमनी जि. राजनांदगांव छत्तीसगढ़ द्वारा प्रकाशित एवं प्रसारित

✧ सत्यध्वज बुलेटिन अनियतकालीन और अव्यावसायिक

✧ सम्पादनप्रबंधन पूर्णतः अवैतनिक

टीप :- 1. सत्यध्वज में प्रकाशित रचनाओं में उल्लेखित विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं जो कि उनके समझ और ज्ञान पर आधारित है। उन विचारों से संपादक मंडल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

2. सत्यध्वज का प्रकाशन गुरू घासीदास जी के व्यक्तित्व और कृतित्व से संबंधित साहित्यिक अभाव की पूर्ति का प्रयास मात्र है। अतएव इस संबंध में किसी व्यक्ति संस्था अथवा समूह के द्वारा उठाये गये किसी भी तरह के विवाद स्वीकार्य नहीं है।

पत्र व्यवहार का पता

दादूलाल जोशी ''फरहद''
संपादक सत्यध्वज पत्रिका
मु. फरहद, पो. सोमनी
जि. राजनांदगांव छत्तीसगढ़
फोन : 07744-220814
मो. नं. : 9302335463

सहयोग राशि
मात्र-25 रूपये

सम्पादकीय

अपनी जिम्मेदारी भी तो समझें।

सतनामी समाज और गुरूघासीदास जी पर गलत, बेतुका और नव-प्रयास-विहीन लेखन एक न समाप्त होने वाली समस्या बन कर रह गयी है। जिन अपमान जनक शब्दों उल्लेखों और विवरणों का सतनामी समाज पिछले दो सौ वर्षों से विरोध करता आ रहा है; उनकी पुनरावृत्ति बोलने और लिखने में आज भी की जी रही है। सतनामी समाज बार-बार आक्रोशित और विद्धेलित होकर धरना-प्रदर्शन करके अपना विरोध प्रकट करता आ रहा है। रेल रोको आन्दोलन भी किया जा चुका है; जिनमें सैकड़ों कार्यकर्त्ताओं को पुलिश के डंडे खाने पड़े तथा न्यायालयीन प्रक्रियाओं से भी गुजरना पड़ा।

समय-समय पर म.प्र. एवं छत्तीसगढ़ शासन ने कतिपय पुस्तकों एवं आलेखों के प्रकाशन और वितरण पर प्रतिबंध भी लगा दिया था। शासन के राजपत्रों में तत्सम्बन्धी सूचना भी प्रकाशित कर दी गई थी; परन्तु आश्चर्य एवं खेद का विषय है कि सतनामी समाज के द्वारा निरंतर विरोध और आपत्ति करने के बावजूद उस तरह के गलत और अपमान जनक लेखन आज भी जारी है। जब समाज के प्रबुद्ध वर्ग को जानकारी मिलती है कि अमुक पुस्तक में सतनामी समाज के बारे में असत्य और अपमान जनक उल्लेख किया गया है; तब समाज में आक्रोश फैल जाता है और तीखी प्रतिक्रिया होती है तथा उक्त पुस्तक या आलेख को जप्त करके लेखकों को दंडित करने की मांग सरकार से की जाती है। मांगों की पूर्ति होने अथवा आश्वासन मिलने के बाद मामला शांत हो जाता है। उसके कुछ महीनों या कुछ वर्षों बाद पुनः उसी तरह की एक दो पुस्तकें सामने आ जाती है। इस तरह यह सिलसिला पिछले तीस-पैंतीस वर्षों से निरंतर चल रहा है किन्तु आज तक उसका स्थायी हल नहीं निकल पाया है। ऐसा क्यों हो रहा है ? यह अंतहीन समस्या क्यों बन गई है ? आखिर इसका स्थायी निदान क्या है ? आदि प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए यर्थाथपरक, निरीक्षण-परीक्षण और खोज करने की जरूरत है। वास्तविक कारणों को बुद्धिमत्ता पूर्ण तरीके से जानने-पहचानने की जरूरत है।जब तक इस तरह के लेखन-प्रकाशन के मूल कारणों को नहीं समझा जावेगा; तब तक इस समस्या का स्थायी हल निकलना मुश्किल है।

जब से छत्तीसगढ़ राज्य अस्तित्व में आया है; तब से पूरे देश में; खासकर हिन्दी क्षेत्र में, छत्तीसगढ़ के जन-जीवन, भौगोलिक स्थितियों, इतिहास और संस्कृतियों पर आधारित लेखन की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ी है। अतिशय महत्वाकांक्षी और अति अर्थाभिलाषी लेखकों

के द्वारा आनन-फानन में पुस्तक लिखकर हिन्दी क्षेत्र के विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल करवाने की होड़ मच गई है। चूंकि इस कार्य में भी तीव्र प्रतिस्पर्धा की स्थिति है इसलिए ऐसे लेखक अपनी पुस्तक लगवाने के लिए सचिव स्तर से लेकर मुख्यमंत्री स्तर तक सम्पर्क बनाने में जी तोड़ प्रयास करते हैं। जिनका आदमी सम्बन्धित महत्वपूर्ण पद पर बैठा होता है अथवा जिनका पौव्वा जम जाता है; उनकी किताबें विश्व विद्यालय और स्कूलों के पाठ्यक्रम में शामिल हो जाती हैं। पहले आवो पहले पावो की आपाधापी में ऐसे लेखकों को कम से कम समय में पुस्तकें तैयार करनी पड़ती है। ऐसी स्थिति में वे लोग संदर्भ ग्रंथो के लिए निकट के लाइब्रेरी की ओर भागते हैं और जो भी उपलब्ध ग्रंथ हाथ में आता है उन्ही के उद्धरणों कों यथास्थिति अपनी पुस्तकों में शामिल कर लेते हैं। अन्य विषयों पर तो यह सब चल जाता है किन्तु सतनामी समाज के बारे में उल्लेख करते समय चूक जाते हैं क्योंकि जिन संदर्भ ग्रंथों का सहारा लिया जाता है; वे सभी सन् 1868 ई. से सन् 1947 ई. तक की अवधि में लिखित-प्रकाशित हुए होते हैं।जैसे गजेटियरों और तत्कालीन जाति और सम्प्रदायों पर तैयार शोध ग्रंथ आदि। उनमें सतनामियों पर संकलित-संग्रहित सामग्री गैर-सतनामी कर्मचारियों और अधिकारियों के द्वारा उपलब्ध कराये जाते थे ; जिनका इस समाज के साथ बैठना-उठना भी नहीं होता था। यह सत्य है कि पचास-या सौ वर्ष पूर्व छत्तीसगढ़ में सभी जाति के लोग सतनामियों के प्रति अत्यन्त घृणा के भाव रखते थे। अतः उनके द्वारा जुटाये गये विंवरण घृणा से प्रेरित होते थे। यही कारण था कि प्राचीन दस्तावेजों और ग्रंथों में स्वस्थ मानसिकता और सत्य-सम्मान जनक उल्लेख नहीं हो पाया हैं चूंकि सौ वर्ष पहले सतनामी समाज में शिक्षा का प्रतिशत शून्य था। अतः उन्हें यह भी ज्ञात नहीं हो पाता था कि उनके बारे में क्या-क्या लिखा जा रहा है। इसीलिए उनमें उल्लेखित नब्बे प्रतिशत विवरण वर्तमान सतनामी समाज को अमान्य है। सतनामियों पर लिखने वालों के तीन तरह के आचरण होते हैं। (1) लापरवाही वश (2) आलस्यवश और (3) जानबूझकर अपमानित करने के उद्देश्य से। जब अपमान जनक उल्लेखों वाली पुस्तकों का सतनामी समाज विरोध करता है; तब उक्त लेखक यह तर्क देते हैं कि वे अमुक-अमुक ग्रंथो या दस्तावेजों से उद्धरण या सामग्री संकलित किये हैं उनका यह तर्क एकदम से स्वीकारणीय नहीं है क्योंकि वे इमानदार और जिम्मेदारी युक्त परिश्रम नहीं करते हैं।

पिछले चालीस वर्षों में सतनामी समाज में सैकड़ों लेखक अपने समाज और संस्कृति पर स्वयं लेखन कर रहे हैं। कई पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ है और अब भी हो

रहा है। जिनमें सतनामी समाज के बारे में वास्तविक लेखन होता है। पाठ्य पुस्तक लिखने वाले गैर सतनामी लेखकों को चाहिए कि वर्तमान समय में सतनामी समाज के लेखकों की कृतियों से ही विवरण लेकर उनका समावेश करें।

दूसरी तरफ ऐसे अपमान जनक लेखन को सदैव के लिए समाप्त करने का प्रयास सतनामी समाज के प्रबुद्ध वर्ग को करना चाहिए। वे अपनी इस जिम्मेदारी को गंभीरता के साथ समझें। केवल धरना-प्रदर्शन करके प्रतिबंध और सजा देने की मांग करना ही पर्याप्त नहीं हैं। समाज में कई साहित्यिक व सांस्कृतिक समितियाँ बनी हुई है। साहित्य अकादमी का निर्माण भी हुआ है। किन्तु वे इस दिशा में कारगर काम नहीं करके केवल मंत्रियों और मुख्यमंत्रियों को बुलाकर उन्हें खुश करने और अपना ''इमेज'' बनाने में लगे हुए हैं। आज सतनामी समाज में सैकड़ो अध्यापक, प्राध्यापक, चिन्तक और लेखक हैं। उन सबको मिल-बैठकर एक ''सतनामी विद्वत् परिषद'' का निर्माण करना चाहिए तथा उन समस्त गजेटियरों और शोघ ग्रंथो को एकत्रित करके उनका अध्ययन करे और प्रत्येक ग्रंथ के ऊपर अपना एक स्वतंत्र समीक्षा पुस्तक का लेखन और प्रकाशन करे। उस समीक्षा पुस्तक में उन ग्रंथो की धज्जियाँ उड़ानी चाहिए जिनमें सतनामियों के बारे में गलत लेखन किया गया है। सतनामी विद्वत् परिषद'' सरकार से यह मांग भी करे कि उनकी समीक्षा पुस्तकों को विश्वविद्यालयों एवं शैक्षणिक संस्थाओं के लिए संदर्भ ग्रंथ के रूप में उपयोग किया जावे। सतनामियों पर लिखते वक्त इन समीक्षा ग्रंथो के अलावा किसी अन्य ग्रंथ से ली गई सामग्री को गैर कानूनी घोषित किया जावे। जब इस तरह के ठोस और सार्थक कार्य होगा तभी अपमान जनक लेखन से मुक्ति मिलेगी। अतः इस दिशा में सतनामी बुद्धिजीवियों को अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। ध्यान रहे आक्रमणकारी जिस तरह के हथियारों का इस्तेमाल करता है ठीक उसी तरह के हथियारों के प्रयोग से ही उनसे निपटा जा सकता है। जब कलम रूपी हथियार से हमला हो रहा है; तब उसका जवाब कलमरूपी हथियार से दिया जाना सर्वथा उपयुक्त होगा। ये तो हमारे अपने विचार या सुझाव है। उपर्युक्त विचारो के अनुरूप समाज में काम शुरू हो पायेगा ऐसी उम्मीद हमें नहीं दिखती है क्योंकि जिस समाज के प्रबुद्ध वर्ग सत्यध्वज को पढ़ने में और मात्र सौ रूपये सहयोग राशि देने में काफी हिचकिचाता हो, उनसे ऐसी उम्मीद करना दिवा स्वप्न मात्र है। जय सतनाम

दादूलाल जोशी 'फरहद'
सम्पादक

पाठकों के पत्र

आदरणीय जोशी जी,

सप्रेम जय सतनाम

आपने मेरा लेख ''समाज एवं गुरूओं के नाम एक संदेश'' को सत्यध्वज पत्रिका में स्थान देकर मेरा मनोबल को बढ़ाया है। मुझे समाज के लोगों का जो आशीर्वाद मिला है। उसके लिए मैं उन आदरणीय जनों का एवं आपका हृदय से आभारी हूँ।

मैं एक और लेख आपको प्रेषित कर रहा हूँ जिसका शीर्षक ''सतनामी जाति के प्रकार एवं सच्चा सतनामी'' है। मुझे यकीन है आप इस लेख को भी सत्यध्वज में प्रकाशित करेंगें। मैने इसे जितना छोटा से छोटा हो सकता है, करने का प्रयास किया हैं, जबकि यह मूल प्रति में बहुत ही विस्तृत रूप में लिखा हुआ है।

भाई कोमल गायकवार भोपाल में सत्यध्वज पत्रिका का जिस निःस्वार्थ भाव से प्रचार-प्रसार करते हैं ; वह तारीफ-ए-काबिल है।

आज के समय में वही आगे बढ़ सकता है; जो अपने आपको, समय, स्थान एवं परिस्थिति के अनुरूप ढाल ले। मुझे यकिन है, वे जैसा सोच रखते हैं, उसे मूर्त रूप देने का भी भरपूर प्रयास करेंगें।

✦ विष्णु प्रसाद बंजारे

म.नं. 131, सेक्टर-15, नया बंश

निरंकारी मार्केट, नोयडा (उ.प्र.)

आदरणीय जोशी जी

आपके द्वारा प्रेषित सत्यध्वज मुझे समय पर प्राप्त हो रहे हैं। पत्रिका ज्ञानवर्धक और उपयोगी है। मेरी इच्छा है कि सत्यध्वज उड़िया भाषा में भी प्रकाशित हो; क्योंकि उड़ीसा में सतनामियों की विशाल संख्या है। यदि आपकी अनुमति हो तो सत्यध्वज को उड़िया भाषा में प्रकाशित करने के लिए हम लोग तैयार हैं।

✦ चिन्तामणि धृतलहरे

ग्राम. व पोस्ट - कोकसरा

जिला - कालाहांडी (उड़ीसा)

(पुस्तक अंश)

सतनाम के प्रचार हेतु विस्तृत यात्राएँ (1830-1840)

- डॉ हीरालाल शुक्ल

1820 ई. से 1830 ई. के मध्य छत्तीसगढ़ एक सांस्कृतिक क्रांन्ति के दौर से होकर गुजरा था। क्रान्तिचक्र के थम जाने पर शान्ति स्थापना का प्रयास आवश्यक था। इसीलिए गुरू घासीदास ने शान्ति और समन्वय का मार्ग अपनाया। उन्होंने "साधुधर्म" का पालन करते हुए सभी भण्डारियों, छड़ीदारों तथा महन्तों को आदेश दिया कि वे वृहत्तर छत्तीसगढ़ में सतनाम का प्रचार करें। उनके इस प्रयोग से समाज में संतों की महत्वपूर्ण भूमिका का ज्ञान होता है। क्या संत को समाज से बाहर रहना चाहिए। क्या संत को पलायनवादी प्रवृत्ति अपनानी चाहिए ? अथवा समाज से विरक्त होते हुए भी उसे प्राणपण से समाज से जुड़ा रहना चाहिए ? गुरू घासीदास ने इस तीसरे विकल्प को ही चुना था।

गुरूघासीदास भारत के उन प्रसिद्ध संतों में से एक हैं, जो उन्नीसवीं शताब्दीं के पूर्वार्द्ध में छत्तीसगढ़ का मार्गदर्शन करते रहे हैं। उन्होंने अपने विश्वासपात्र भण्डारियों तथा महन्तों के साथ समूचे क्षेत्र में विचरण कर एक आध्यात्मिक रूपान्तरण प्रस्तुत कर दिया था। इस अंचल में कार्यरत ब्रिटिश अधिकारी (यथा चीशोल्म, हीवेट, ग्राण्ट इत्यादि) उनके "मिशनरी" सोच से प्रभावित थे।

गुरूघासीदास ने "सतनाम" मत को सरल शब्दों में व्यक्त करके अभूतपूर्व परिवर्तन उपस्थित कर दिया था। आश्चर्यजनक यह है कि जिन गाँवों की उन्होंने यात्रा की, उन्होंने वहाँ की जनसमस्याओं के निराकरण का प्रयास किया। उनकी इस प्रकार की यात्राओं को 'रावटी' (पड़ाव) कहा जाता है, जो परम्परया मौखिक रूप में सतनामी समाज में आज भी प्रचलित हैं। राज महंत किशनलाल कुर्रे (1986:47-50) ने इनकी "सात रावटियों" की चर्चा की है। इन "रावटियो" का विस्तृत विश्लेषण मेरे संस्कृत-महाकाव्य "श्रीगुरूघासीदासचरितम्" (1994) में हुआ है। इन रावटियों के अनुसार गुरू घासीदास ने बस्तर (दन्तेवाड़ा) काँकेर, पानाबरस, डोंगरगढ़, राजनांदगांव, कवर्धा तहसील के भोरमदेव तथा बिलासपुर जिले के दलहा पोंड़ी नामक स्थान की यात्रा की थी। छत्तीसगढ़ से बाहर मण्डला, बालाघाट, जबलपुर तथा अमरकण्टक में भी उन्होंने अपने मत का प्रचार किया था। एक पंथीगीत में राजनांदगांव जिले के गंडई क्षेत्र में जाकर वहाँ के कुष्ट रोगियों की सेवा का भी उल्लेख मिलता है -

तारे हो तारे गुरूजी कोढ़ी के जीवन ल
सत्य भवन के हो राखे हो नांव ल
गंडई में मेला भरे साधुमुनि ग्यानी के
आये हावै नर-नारी देस-देसानी के
कोढ़ी के दल आये गिरत दौड़त रोवत हो
बड़े-बड़े साधुमन के चरन ल धोवै हो
रो-रो के कोढ़ी कहै हंसा ल उबारा हो
हमरे जनम ल बाबा लेवा सुधारा हो
कोढ़ी के दुख देख सब तिरियावैं हो
बोलत हे साधु एक कोढ़ी दल के
गुरू घासीदास के बलावथे बल के।

इन विविध क्षेत्र की यात्रा करके गुरूघासीदास ने जनता के दुःखों को दूर करने का प्रयास किया। अपनी इन यात्राओं के कारण वे आम जनता के बहुत निकट पहुँच गये थे। रसेल तथा हीरालाल (1916 प्रथम खण्ड 309) के अनुसार समूचे समुदाय के बीच वे सुपरिचित थे। उनके बीच बहुत अधिक यात्रा के कारण उनका लोकज्ञान बहुत विस्तृत था। आम जनता के बीच उनकी अत्यधिक प्रतिष्ठा थी।

गुरूघासीदास ने अपने को किसी राजनैतिक कार्यकलाप से नहीं जोड़ा। उनका इससे भी कोई मतलब नहीं था कि उनके द्वारा लाए गए सामाजिक उत्थान से ब्रिटिशराज अपनी रोटियाँ सेक रहा था। भले ही ब्रिटिशराज सतनामियों के ईसाईकरण का सुनहरा सपना (ग्राण्ट 1870) देख रहा हो, किन्तु गुरूघासीदास इन सबसे बेखबर थे। वे तो जनता के आन्तरिक जीवन से घनिष्ठता के साथ जुड़ गए थे। उन्होंने अनुभव किया था कि विविध विध्वंसक शक्तियों के भयावह अभ्याघात से जनता की आन्तरिक योग्यता क्षीण हो गयी थी। वे जनता की रक्षा के लिए कृतसंकल्प थे। इसलिए वे जहाँ भी दुःख दर्द देखते, वहाँ की जनता के पास दौड़े चले जाते थे। जनता का दुःख दूर करते थे। वे चाहते थे कि छत्तीसगढ़ी जनता की खोयी हुई प्राणशक्ति पुनः लौटे। उनके जीवन के यात्रापथ बहुत ही रोचक हैं। उनमें उन्होंने अपने सिद्धान्तों का स्वतः ही परीक्षण किया था।

ऐसा माना जाता है कि संत या सन्यासी वह हैं, जिसने भोग को त्यागकर योग का वरण कर लिया है। परिवार और समाज के उत्तरदायित्वों से मुक्त हो गया है। सामाजिक

व्यवस्था के हाशिए में आ गया है। इस प्रकार का परावर्तन उन लोगों के लिए आवश्यक है, जो आत्मतत्व की गहराइयों में डूब जाना चाहते हैं। जब तक आत्मा भोगवादी चित्त से निवृत्त नहीं होती, तब तक व्यक्ति का चित्त निर्मल नहीं होता, और वह तटस्थ भाव से सोच नहीं सकता। किन्तु इस प्रकार का परावर्तन पूर्ण आध्यात्मिक यात्रा नहीं है। जब संत उच्च कोटि की उपलब्धियों से जुड़ जाता है और परम तत्व के साथ तदाकार हो जाता है, तब वह 'जीवन मुक्त' हो जाता है। यह जीवन उसकी आध्यात्मिक दृष्टि को बदल देता है। तब वह अलगाव या भेद का अनुभव नहीं करता। निम्न स्तर के सभी मनमुटाव, विभाजन तथा झगड़े मिट जाते हैं। वह अपने अनुभव और ज्ञान से अपने परिवेश को सम्प्रेषित करना चाहता है। इसी रूप में वह समुदाय को पुनः प्राणशक्ति सम्पन्न करता है और नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों के संरक्षण में मदद मिलती है।

गुरूघासीदास का जीवन परावर्तन और पुनरागमन का निदर्शक है। पराशक्ति ने उन्हें "नवी" (देवदूत) बनाकर नेतृत्व प्रदान किया था। तात्पर्य यह है कि सोनाखान के जंगल में तपस्या के उपरांत उन्होंने "सत्य" का साक्षात्कार किया था। वे सतनाम के आध्यात्मिक "मिशन" से पूरी तरह प्रदीप्त हो उठे थे। इसी मिशन के तहत उन्होंने अपने आस-पास के भंडारियों तथा मंहतों को दीक्षित किया था और उन्हें समाज संस्कार के महत्वपूर्ण दायित्व को सौंपा था। गुरूघासीदास ने पाया कि जनता अज्ञान के अंधकार में डूबी हुई है। भूख से पीड़ित है। बीमारियों से जकड़ी हुई है। मिथ्या विश्वासों तथा अंधविश्वास के गिरफ्त में है। उनका मानना था कि जब तक लोगों से नहीं मिला जायेगा, लोगों का उत्थान नहीं होगा। लोगों के साथ तदाकार होना पड़ेगा। उनके साथ वात्सल्य भाव से जीना होगा और उन्हें अच्छे जीवन की शिक्षा देनी होगी। इस कार्य के लिए गुरूघासीदास ने विस्तृत यात्राएँ की। इस "जीवन्मुक्त" आत्मा के करिश्माई नेतृत्व से छत्तीसगढ़ की आम जनता ने राहत की साँस ली। उसमें एक नए प्रकार की जागृति आयी।

गुरूघासीदास का यह कार्य बहुत ही जोखिम भरा था। लोगों ने उनकी इहलीला को ही समाप्त करने का कुप्रयास किया (बोस 1890); किन्तु अनुयायियों की सतर्कता से वे बच गए। हमने यह माना है कि वे क्रान्तिकारी थे। इसीलिए वे आध्यात्मिक तथा नैतिक कार्यकलापों को सामाजिक उत्थान के साथ जोड़ कर चलते थे। यह भी संकेत किया जा सकता है कि अन्तर्मुखी व्यक्तित्व का धनी यह संत आध्यात्मिक चिन्तन में इतना व्यस्त रहा होगा कि पूरी तरह समुदाय के जीवन में हिस्सा न ले सका होगा। इन बातों के आधार पर यह

कहा जा सकता है क्रान्तिकारी होते हुए भी गुरूघासीदास एक संत प्रकृति के महापुरूष थे। गुरू घासीदास का संतत्व उनके क्रान्तिकारी जीवन का स्त्रोत था। उनका क्रान्तिकारी तथा साधुरूप मानवता के प्रति गहरी चिन्ता का विषय था। इसीलिए एक संत का क्रान्तिकारी होना उसका अवमूल्यन नहीं है। परमात्मा के साथ तदाकार होने का तर्क भी अपने आप में इस तथ्य का द्योतक है कि ''मैं और 'तू' का भेदभाव समाप्त हो गया है। गुरूघासीदास मानवता के साथ तदाकार हो जाते हैं। यहाँ आकर उनका जीवन सामाजिक धारा के साथ मिल जाता है। फिर वे उस धारा को प्राणवान् बनाते हैं। चूँकि गुरूघासीदास के पास आध्यात्मिक शक्ति का अक्षय भंडार था, अतएव उन्होंने सामाजिक जीवन को ऊपर उठाया - उसे पूरी तरह उलट - पुलट दिया। वे छत्तीसगढ़ी समाज की एक नियामक शक्ति थे; क्योंकि विविध स्तरों के साथ उनकी अपनी एक पहचान थी। इसी कारण वे संघर्षजड़ित समाज में पुनः समरसता पैदा कर सके।

गुरूघासीदास ने समाज में मूल्यों और दैनिक-कार्यकलापों के प्रति अनुराग पैदा करके समाज को नए तरीके से जगाया था। दोपहर के बाद हल न चलाना या खेतों में हलवाहों के लिए भोजन न ले जाना जैसे उपदेशों में यही भाव छिपा हुआ है। उन्होंने लोगों में अंधविश्वास के खिलाफ चेतना फैलायी थी। मूल्यों के प्रति सही जागरूकता और उनके सही आचरण पर उन्होंने बल दिया था। अपनी लम्बी-लम्बी यात्राओं पर जाने से पूर्व उन्होंने अपने अनुयायियों को सुधारने का भी पूरा प्रयास किया था। उन्होंने भ्रष्ट आचरणों से अपने अनुयायियों को मुक्त कराया। मांस, मंदिरा या किसी भी प्रकार के नशा से उन्हें खबरदार किया। वे जानते थे कि आध्यात्मिक और सामाजिक जीवन के लिये ये कलंक हैं। वे चाहते थे कि उनके अनुयायियों का जीवन सचाईयों से भरा हुआ हो। वे सच तथा झूठ में फर्क कर सकें। अनुयायियों को सबसे पहले अपने-आप से ही संघर्ष करना था, किन्तु दुर्भाग्यवश वे बाह्य संघर्ष में उलझ गए। गुरूघासीदास जानते थे कि अपने से संघर्ष किए बिना आध्यात्मिक यात्रा अधूरी रहती है; बाह्य संघर्ष नकारात्मक हो जाता है। ऐसा हुआ भी। वे मानते थे कि ''सतनाम'' के निरंतर स्मरण से ही व्यक्ति सत्य की खोज के अंतिम लक्ष्य तक पहुँच सकता है।

अपने ''मिशन'' की सफलता के लिए वे निरंतर यात्रा करते रहे। उन्होंने अपना संदेश आम जनता की भाषा छत्तीसगढ़ी में ही दिया। उनके मन में जनता के प्रति अपार प्रेम था। लोग उनके इस सहज मार्ग से प्रभावित हुए और उन्हें अपना ''मसीहा'' (हीरालाल तथा रसेल, प्रथम खंड) मान लिया।

(गुरूघासीदास संघर्ष समन्वय और सिद्धांत; अध्याय चार पृष्ठ - 135 से)

अमर कथाएँ

किसी को दुःख देना ही पाप हैं

- डॉ. जे. आर. सोनी

डी-95, गुरू घासीदास कॉलोनी, न्यू राजेन्द्र नगर, रायपुर (छत्तीसगढ़)

परमानंद गुरूजी ने कहा, क्या तुमने गिरौदपुरी का नाम सुना हैं ? जानते हो यह कहाँ हैं ? और क्यों प्रसिद्ध हैं ? गिरौदपुरी, रायपुर जिले के बिलाईगढ़ थाना का एक गांव हैं। इसी गिरौदपुरी की एक घटना हैं। इस गाँव के बाहर एक मैदान था। वहाँ कुछ बच्चे खेल रहे थे। पास में ही गन्ने का एक खेत था। खेलते-खेलते एक बच्चे ने कहा-वाह ! कितने मीठे रसदार गन्ने हैं।

तब दूसरे ने कहा - चलो इन्हें तोड़कर खाया जाय। गन्ने देखकर सभी बच्चों के मन में लालच आ गया और वे सब के सब गन्ने के खेत में घुसने लगे; पर उनमें एक बालक ऐसा भी था, जिसे यह अच्छा नहीं लगा। उसने अपने साथियों को समझाते हुए कहा - मित्रों, यह तो अच्छी बात नहीं हैं। हमें खेत के मालिक से पहले पूछ लेना चाहिए। बिना पूछे किसी दूसरे की वस्तु को लेना तो चोरी करना हुआ और चोरी करना पाप हैं।

तब रामू ने उसकी नकल करते हुए कहा - "अरे वाह ! बड़ा आया उपदेश देने वाला - चोरी करना पाप हैं।" श्याम ने कहा - "अरे भाई, इसमें चोरी की क्या बात हैं ? इतने बड़े खेत में से हम दो चार गन्ने तोड़ ही लेगें तो क्या फर्क पड़ेगा ?"

तब खेत की मेड़ पर खड़े उस बालक ने कहा - "नहीं। तुम गलत कह रहे हो। एक बार हमारी बाड़ी में से कुछ लोग कुम्हड़ा और मिर्च तोड़कर ले गये थे। तब हमारे पूरे परिवार को दुःख हुआ था। इसी तरह यदि हम एक भी गन्ना तोड़ेगे तो इस खेत के मालिक को दुःख होगा। अतः हमें यह पाप नहीं करना चाहिए।"

उसकी बात सुनकर सोहन ने उसका उपहास उड़ाने के लिए कहा "अच्छा बता पाप-पुण्य क्या हैं ? बड़ा आया हमें ज्ञान देने"। तब उस लड़के ने कहा "किसी को दुःख पहुँचाना ही पाप हैं और किसी की भलाई करना ही पुण्य है।" मेड़ पर खड़े उस बालक ने अपने साथियों को समझाना चाहा पर साथियों ने उसकी बात नहीं मानी और वे सब के सब गन्ना तोड़ने खेत में घुसने लगे।

"मैं तुम्हें यह गलत काम नहीं करने दूँगा। अभी भी रूक जाओ।" बालक ने चेतावनी दी, पर तब भी उसके साथी नहीं माने तो उसने चिल्लाकर खेत के मालिक को बुला लिया। खेत का मालिक आ गया। चोरी करने वाले बच्चे पकड़ लिये गए। पीटे जाने के डर से वे रोने लगे।

तब इस तेजस्वी बालक ने खेत के मालिक से कहा - "इन्हें क्षमा कर दीजिए। भविष्य में ये सब कोई गलत काम नहीं करेंगे।" बालक के सरल स्वभाव और ईमानदारी को देखकर खेत के मालिक ने सभी बच्चों को क्षमा कर छोड़ दिया।

जानते हो यह बालक कौन था ? लाखों लोगों को धर्म का पाठ पढ़ाकर उन्हें सत्य के पथ पर चलने के लिए प्रेरित करने वाले इस बालक का नाम था घासीदास। आगे चलकर वह महान सन्त गुरू घासीदास के नाम से विख्यात हुआ। गुरू घासीदास ने छत्तीसगढ़ में सतनाम पंथ की स्थापना की।

सतनाम पन्थ के प्रवर्तक गुरू घासीदास का जन्म 18 दिसम्बर सन् 1756 ई. में हुआ था। गुरू घासीदास के पिता का नाम श्री महूँगू तथा उनकी माता का नाम अमरौतिन बाई था। उनके चार भाई थे ननकूदास, मनकूदास, जोगीदास और घासीदास। उनका बचपन बहुत गरीबी में बीता। उनका विवाह सिरपुर के श्री अजोरी की बेटी सफुरा के साथ हुआ था।

उन दिनों समाज में छुआछुत का रोग बहुत बुरी तरह फैला था। इस रोग ने हिन्दु समाज की जड़े खोखली कर दी थी। गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी और शोषण के कारण लोग बहुत दुःखी थे। यह सब देखकर घासीदास घर द्वार छोड़कर मानव कल्याण और सत्य की खोज में निकल पड़े। उन्होंने छः महीने तक पहाड़ियों के पीछे फैले सोनाखान के घने जंगल की छाता पहाड़ी में जाकर तपस्या की।

तपस्या से उनकों आत्मज्ञान हुआ। तब गिरौदपुरी में 28 दि. 1820 को उनका दर्शन करने तथा ईश्वरीय सन्देश सुनने गिरौदपुरी में हजारों लोग एकत्रित हो गए थे।

गुरू घासीदास जी ने कर्मयोग के सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। उनका मत था कि गृहस्थाश्रम में रहते हुए सामाजिक बुराइयों को दूर करके सत्य, अहिंसा, परोपकार जैसे नैतिक आदर्शो का पालन करना चाहिए। मानवता को तथा मानव सेवा को सच्ची सेवा

मानने वाले ये महापुरूष सन् 1850 में सतनाम का प्रचार करते हुए कहाँ चले गए किसी को पता नहीं चल सका।

इस संत के सद् वचन की सात प्रमुख बातें हैं - दिव्य संदेश :

1. मादक पदार्थो से परहेज करो।
2. मांस तथा मांस जैसी वस्तुओं से परहेज करों।
3. सामाजिक एकता की आचार-संहिता का पालन करो।
4. मूर्ति पूजा बन्द करो।
5. गायों को हल में जोतना बन्द करों। दोपहर के बाद हल चलाना बन्द करों।
6. सतपुरूष सतनाम की निराकार उपासना, भजन तथा ध्यान करों।
7. परनारी को माता जानो।

गुरू घासीदास के शिष्य सतनामी कहलाते हैं। गिरौदपुरी, भंडारपुरी में उनके नाम पर मेला भरता हैं। वहाँ जयस्तम्भ की जिसे जैतखाम भी कहते हैं, पूजा होती हैं। छत्तीसगढ़ के हर गाँव में तुम्हें एक साफ-सुथरा चबुतरा तथा जैतखाम पर फहराता हुआ सफेद झंडा देखने को मिल जायेगा। यह सत्य और सात्विक आचरण का प्रतीक हैं।

अनमोल विचार

जिन्दगी धन और सत्ता के संचय का नाम नहीं है बल्कि आशीर्वादों के मोतियों को एकत्र करने का नाम है। जहाँ धन और सत्ता की प्राप्ति के लिए शोषण और जुल्म अनिवार्य है; वहाँ आशीर्वादों के मोती बटोरने के लिए किसी को पीड़ित करने की नहीं बल्कि दूसरों की पीड़ा हरने की जरूरत है।

सच्चा सुख अनन्त इच्छाओं की पूर्ति के पीछे भागने का नाम नहीं है (जो कि मृग तृष्णा मात्र है।) बल्कि जीवन में सादगी, सन्तोष और सदाचरण अपनाने का नाम है।

सच्चा धर्म दिखावे और आडम्बर का नाम नहीं है बल्कि मानव सेवा और त्याग भावना द्वारा दीन-दुखियों के आँसू पोछने और प्यार बांटने का नाम है।

(संकलित)

गुरूघासीदास की अमृत वाणियाँ

"सोवै तौन खोवै, जागै तौन पावै"

- भाऊराम घृतलहरे
इन्दू चौक, जरहाभाठा, बिलासपुर

"जो व्यक्ति गहरी निद्रा में सो जाता है। वह व्यक्ति स्वयं को खो देता है, परंतु जो व्यक्ति गहरी निद्रा में भी जागता रहता है। वह स्वयं को पाता (जानता) है।"

सद्गुरू घासीदास ने तपोभूमि में औरा-धौरा पेड़ के नीचे कठिन तप के अंतिम समय में अपनी अखण्ड चिन्मयी दृष्टि से बुद्धि की सभी अवस्थाओं के साक्षी, नित्यमुक्त, शुद्ध, सत्वमय, सर्वज्ञ, निर्विकार, अखण्ड, अनादि अनंत, आनंदमय, निर्गुण-निराकार, परम तत्व, परम स्वतंत्र, परम चेतन, सतनाम सत्पुरूष के सत्स्वरूप का दर्शन किया तथा सत्स्वरूप सद्ज्ञान में प्रतिष्ठित होकर उन्हीं की प्रेरणा से जगत् के घोर अज्ञानान्धकार मिटाने, मानव मात्र का कल्याण करने, सद्ज्ञान, स्वरूप सद्धर्म 'सतनाम' की स्थापना करने के लिये वापस गिरौदपुरी लौट आये। उस समय जिज्ञासु संतों की भीड़ उमड़ पड़ी थी। बाबा जी की जै - जैकार हो रही थी। उन पर पुष्पों की वर्षा हो रही थी। सर्वत्र आनन्द एवं शान्ति का माहौल था। बाबा जी को आसन पर बिठाया गया। उनकी पूजा अर्चना की गई। बाबा जी ने सभी संतों एवं आगन्तुकों को बैठने का संकेत किया। सभी लोग बैठ गये। सभी संतों ने परमानंद एवं अनंत शान्ति का अनुभव किया। कुछ क्षण पश्चात् जिज्ञासु संतों ने अत्यंत नम्रतापूर्वक सद्गुरू घासीदास जी से प्रश्न किया। हे बाबा ! हमें बताइये कि हम कौन हैं, हम कहां से आये हैं, हमारा स्वरूप क्या है, हमारी गति क्या है; और हम मरने के बाद कहाँ जायेंगे ?

प्रश्न सुनकर गुरूघासीदास जी गद्गद हो गये। अत्यन्त पुलकित होकर प्रेम भरी मधुर वाणी में वे बोले। प्रिय संतों ! "सौवै तौन खोवै, जागै तौन पावै। "जो व्यक्ति गहरी निद्रा में सो जाता है, वह व्यक्ति स्वयं को खो देता है, परंतु जो व्यक्ति गहरी निद्रा में भी जागता है, वह स्वयं को पाता है (जानता है)। बाबा जी कहने लगे - प्रिय सन्तों ! यह प्रश्न अलौकिक है, यह अत्यन्त ही सूक्ष्म धर्म तथा सूक्ष्म ज्ञान का विषय है। इस प्रश्न का उत्तर बड़े-बड़े विद्वान भी नहीं जान पाते। जिस प्रकार तेजोमय सूर्य रश्मियों में जल का, जल में स्थल का स्थल में जल का भ्रम होता है वैसे ही यह विषय अत्यंत ही सूक्ष्म ज्ञान का होने के कारण बड़े-बड़े विद्वान् भ्रमित हो जाते है। परंतु तुम्हारी जिज्ञासा को देखकर तुम्हारे कल्याण के लिये इस, रहस्यमय सूक्ष्म ज्ञान का वर्णन करता हूँ।

प्रिय सन्तों !

आदि में अद्वितीय सत् ही था सत् के सिवाय कुछ भी नहीं था। सत् ही सतनाम सत्पुरूष है। यही आदि में था। वह परम् चेतन, परम स्वंतत्र, अजन्मा, अविनाशी, अनादि, अनन्त, अगम, अगोचर, शुद्ध, बुद्ध महापवित्र, निर्गुण-निराकार है। सत् से ही इस चर-अचर, जड़ चेतन, व्यक्त अव्यक्त संपूर्ण जगत् की सृष्टि होती है। सत् से ही जगत् की सृष्टि, स्थिति और प्रलय होते है। जो सार तत्व, जगत् का कारण है, सकल वस्तुओं की आत्मा है वहीं सत् है। हे प्रिय सन्तों ! वहीं तुम हो। तुम स्वयं सत् हो सत्स्वरूप हो। तुम सभी सत् से ही आये और सभी सत् में ही वापस लौट जाओगे। तुम सभी अजन्मा और अविनाशी हो, तुम्हारी कभी मृत्यु नहीं, तुम स्वयं सत्स्वरूप हो। मृत्यु तो तुम्हारी देह की होती है। प्रतिदिन सुषुप्तावस्था में सत् को प्राप्त होते हो परंतु पार्थक्य ज्ञान के अभाव में नहीं जान पाते कि तुम सत् को प्राप्त होते हो। हे प्रिय सन्तों ! मेरे इस कथन पर श्रद्धा करो क्योंकि श्रद्धायुक्त सत्य ही सत् है।

इतना कहकर गुरू घासीदास जी ने अपनी वाणी को विराम दिया। इस पर सन्तों ने इस सूक्ष्म तत्व को विस्तार से कहने की प्रार्थना की। सन्तों की परम् जिज्ञासा को देखते हुये गुरू घासीदास जी ने इसका वर्णन विस्तार से करने लगे। जब कोई व्यक्ति दर्पण को देखता है तो उस समय उस व्यक्ति का प्रतिबिंब दर्पण पर दिखाई देता है। दर्पण को हटा लेने पर उसका प्रतिबिंब उस व्यक्ति को ही प्राप्त हो जाता है। जिस प्रकार दर्पण को हटा लेने पर दर्पण में स्थित पुरूष का प्रतिबिंब स्वयं पुरूष को ही प्राप्त हो जाता है। उसी प्रकार उस सुषुप्तावस्था में मन आदि की निवृत्ति हो जाने पर चैतन्य के प्रतिबिंब रूप से जीवात्मभाव से नाम रूप की अभिव्यक्ति करने के लिये मन में प्रविष्ठ हुआ वह परदेवता मनसंज्ञक जीवरूपता को त्यागकर स्वयं अपने सत् स्वरूप को ही प्राप्त हो जाता है। जो परमार्थ सत्य है उसी को प्राप्त हो जाता है। इस सुषुप्ति अवस्था में वह पुण्य और पाप से असंबद्ध होता है तथा हृदय के सम्पूर्ण बंधन एवं समस्त शोकों के परे होता है। इसका यह रूप काम, धर्म-अधर्म तथा अविद्या से रहित होता है। यह परमानंद की स्थिति है।

प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन शारीरिक एवं मानसिक श्रम करता है सुषुप्ति जाग्रत अवस्था के श्रम के कारण होती है। जाग्रत अवस्था में पुरूष पुण्य - पाप के कारण होने वाले सुख-दुख आदि अनेक प्रकार का श्रम अनुभव करने से थक जाता है। उनके कारण अनेक प्रकार के व्यापार से शिथिल हुई इंद्रियों की अपने व्यापारों से निवृत्ति हो जाती है। वाणी भी थक

जाती है, नेत्र भी थक जाते है और कान भी थक जाते है। प्राण से वाणी गृहीत हो जाती है, चक्षु गृहीत हो जाती है, कान गृहीत हो जाते है और मन गृहीत हो जाते है; एक प्राण ही अश्रान्त रहता है जो कि देह रूप में जागता रहता है। उस समय जीव श्रम की निवृत्ति के लिये अपने स्वाभाविक सत् रूप को ही प्राप्त हो जाता है। क्योंकि स्वरूप में स्थित होने के सिवाय और कहीं श्रम की निवृत्ति नहीं हो सकता इसलिये उस समय वह अपने स्वरूप को प्राप्त हो जाता है।

जिस प्रकार चिड़ीमार के हाथ में पकड़ी हुई डोरी में बंधा हुआ पक्षी दिशा विदिशा में उड़कर अन्यत्र स्थान न मिलने पर अपने बंधन स्थान का ही आश्रय लेता है उसी प्रकार यह मन दिशा-विदिशाओं में उड़कर अन्यत्र स्थान न मिलने से प्राण का ही आश्रय लेता है क्योंकिमन प्राण रूप बंधनवाला ही है। वह मन सञ्ज्ञक उपाधि वाला जीव जाग्रत और स्वप्न के समय अविद्या, कामना और कर्म द्वारा प्रेरित होकर सुख-दुख आदि रूप दिशा-विदिशा में उड़कर जाकर और उन्हें अनुभव कर अपने सत संज्ञक स्वात्मा के अतिरिक्त और कही आश्रय अथवा विश्राम न पाकर सत् संज्ञक प्राण का ही आश्रय करता है। इसलिये हे संतों ! जो व्यक्ति गहरी निद्रा में भी जागता है वही अपने सत्स्वरूप को प्राप्त करना है, जानता है।

बाबा जी और आगे कहते है कि हे सन्तों ! परंतु स्वप्नावस्था में सोया हुआ मनुष्य सत् को प्राप्त नहीं करता है। क्योंकि जिस अवस्था में सोया हुआ मनुष्य स्वप्न देखता है वह स्वप्न दर्शन सुख-दुख से युक्त होता है, इसलिये वह पुण्य-पाप का कार्य है, क्योंकि पुण्य-पाप ही क्रमशः सुख-दुख के आरंभक रूप में प्रसिद्ध है। किन्तु पुण्य-पाप का जो सुख-दुख और उनके दर्शन रूप कार्य का आरंभकत्व है वह अविद्या और कामना के आश्रय से ही सम्भव है, और किसी प्रकार नहीं, इसलिये स्वप्न संसार के हेतुभूति अविद्या, कामना और कर्म इनसे संयुक्त ही है। अतः स्वप्नावस्था में जीव अपने सत् स्वरूप को प्राप्त नहीं होता है।

प्रिय सन्तों ! निद्रा की दो अवस्थाएँ होती है। पहला सुषुप्ति काल और दूसरा स्वप्नावस्था। इसी प्रकार निद्रा की दो वृत्तियाँ है - दर्शन वृत्ति याने स्वप्न और अदर्शन वृत्ति याने गाढ़ी सुषुप्ति। जिस समय यह जीव निद्रा को प्राप्त होकर सो जाता है अर्थात् सुषुप्ति काल में होता है उस समय जीव की संपूर्ण इंन्द्रियाँ, अपनी सम्पूर्ण वृत्तियों का परित्याग कर देती है। इन्द्रिय वृत्तियों का उपसंहार हो जाने से उनका बाह्य विषयों के संपर्क से प्राप्त हुई मलिनता का अभाव हो जाता है। मलिनता का अभाव हो जाने से वह आनंदमय हो जाता है। मलिनता का अभाव हो जाने से विषयाकार से भासित होने वाले मानसिक स्वप्न प्रत्यय को नहीं जानता,

अर्थात् उसका अनुभव नहीं करता। जिस समय इस प्रकार सो जाता है उस समय वह हृदय की मूर्धन्य नाड़ियों में प्रविष्ट होता है। इन द्वारभूत नाड़ियों से हृदयाकाश में पहुंच जाता है। इस तरह वह सत् को प्राप्त हो जाता है।

सत् को प्राप्त हुये उस प्राणी को कोई भी धर्माधर्म रूप पाप स्पर्श नही कर सकता, क्योंकि उस अवस्था में आत्मा अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है। जो जीव देह और इन्द्रियों में प्रविष्ट है उसी को सुख-दुख रूप अपने कार्य प्रदान करके पारस स्पर्श कर सकता है। सत् को प्राप्त हुये स्वरूपावस्थित आत्मा को स्पर्श करने का कोई भी पाप साहस नहीं कर सकता, क्योंकि वह उसका विषय नही है अन्य ही अन्य का विषय हुआं करता है और सत् को प्राप्त हुये जीव का किसी से भी किसी कारण से अन्यत्व है नही। आत्मा का जाग्रत या स्वप्नावस्था को प्राप्त होना तथा बाह्य विषयों को अनुभव करना ही स्वरूप से च्युत होना है, क्योंकि अविद्यारूप काम और कर्म का जीव सद्विद्या रूप अग्नि से दग्ध न होने के कारण ही रहता है।

जिस समय यह जीव इस प्रकार गाढ़ी निद्रा में सो जाता है उस समय सब ओर से नाड़ी के अन्तर्गत और तेज से व्याप्त हो जाता है, इसलिये तब इसकी इन्द्रियाँ बाह्य विषयों के भोग के लिये नाड़ियों के द्वारा निरूद्ध हो जाती है। इसी से इन्द्रियों का निरोध हो जाने के कारण अपने स्वरूप में ही स्थित हुआ यह जीव स्वप्न नही देखता। इस प्रकार सद्गुरू घासीदास जी ने सुषुप्ति काल में जीव के सत् स्वरूप को प्राप्त करने की स्थिति का सविस्तार वर्णन किया।

गुरूघासीदास जी द्वारा लौकिक जगत् का ज्ञान देना

गुरूघासीदास जी कहने लगे प्रिय सन्तों ! अभी मैने तुम्हे जो सदोपदेश दिया है वह सूक्ष्म धर्म तथा सूक्ष्म ज्ञान का विषय है। इसकी अनुभूति हो जाने पर मनुष्य सत्यस्वरूप होकर भव सागर से पार हो जाता है और परमगति को प्राप्त करता है अब मै तुम्हें लौकिक जगत् का ज्ञान कराता हूँ। इस जगत् में जो व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रति सजग नहीं रहता वह व्यक्ति अपना सब कुछ खो देता है और जो व्यक्ति अपने अधिकारों के विषय में सजग रहता है वह व्यक्ति सब कुछ प्राप्त कर लेता है। आज का वर्तमान समाज इसी का ही परिणाम है। आज का समाज वर्णभेद, जातिवाद, वर्गभेद, सामंतवाद, अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न, शोषण, दरिद्रता, भूखमरी आदि से ग्रसित है। संपूर्ण समाज, तथाकथित ऊँची जाति के जकड़न में जकड़ी हुई रहे है। आय के समस्त साधन पर उनका एकाधिकार है। धार्मिक

आडंबर, कट्टरता एवं अंध विश्वास अपनी चरम सीमा पर है। शोषित और उत्पीड़ित जनता दुर्व्यसनों और दुर्गुणों के शिकार है। सर्वत्र त्राहि-त्राहि एवं हाहाकार मचा है। समाज का एक बहुत बड़ा भाग सदियों से सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक अत्याचार एवं शोषण की असह्य पीड़ा को झेलते आ रहा हैं।

गुरूघासीदास जी के इस कथन पर सन्तों ने पूछा - हे गुरू बाबा ! इस सामाजिक ऊँच नीच, अमीरी-गरीबी, शोषण, आत्याचार और धार्मिक अंधविश्वास का कारण क्या है ? इस पर बाबा जी कहने लगे - प्रिय सन्तों ! हमारे पूर्वज अपने हितों के प्रति जागरूक नहीं रहे क्योंकि उन्हें शिक्षा नहीं मिली। जिससे वे अपना भला-बुरा नहीं समझ सके। इसका मुख्य कारण धार्मिक अंध विश्वास था। धर्म के आड़ में परम्परा वादियों ने बहुसंख्यक समाज का खूब शोषण किया। उन्होने में चालाकी एवं चतुराई से चातुर्वर्ण्य की अधम व्यवस्था से बहु संख्यक समाज को शिक्षा से वंचित कर दिया शस्त्र पर.क्षत्रिय का अधिकार था। आय के समस्त साधन के श्रोत व्यापार पर वैश्यों का अधिकार था। बहुसंख्यक शूद्र, कृष्क, शिल्पी, कारीगर और सेवक बनकर रह गये। इनकी अज्ञानता का लाभ तीनों वर्णों ने खूब उठाया। क्योंकि शूद्र इन पर आश्रित बन कर रह गया। तीनों वर्ण मिलकर शुद्र पर सदियों से शोषण एवं अत्याचार करते आ रहे हैं। इन्हें धन संपत्ति अर्जित करने की अनुमति नहीं मिली क्योंकि वे चाहते थे कि वे उन पर निर्भर रहें। उन्हें विद्या प्राप्त करने से रोका गया ताकि वे अपने हितों के प्रति सजग न हों जायें। उन्हें शस्त्र धारण करने से रोका गया कही ऐसा न हो कि वे उनकी सत्ता के विरूद्ध विद्रोह करने के साधन प्राप्त कर लें। इसी कारण सदियों से वर्णभेद, जातिवाद, अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न, शोषण, दरिद्रता, भुखमरी आदि के शिकार होते आ रहे हैं। जीवन भर मेहनत करने के बावजूद भी वे आर्थिक विपन्नता के शिकार रहे।

बाबा जी के इस कथन पर सन्तों ने प्रश्न किया - गुरू बाबा ! ये बहु संख्यक होने के बाद भी आत्याचार और शोषण के शिकार रहे हैं इन्होंने इसका विरोध क्यों नहीं किया ?

गुरू बाबा ने कहा - सन्तों ! चातुर्वर्ण्य की इस अधम व्यवस्था के कारण ये शस्त्र धारण नही करते और शस्त्र के बिना वे विद्रोह नहीं कर सकते थे और विद्रोह के बिना क्रांति नहीं आ सकती और क्रान्ति के बिना इस सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक अव्यवस्था को समाप्त नहीं किया जा सकता। वैसे भी इनके पास संपत्ति नहीं हैं क्योंकि संपत्ति में बड़ी ताकत होती है। चातुर्वर्ण्य के कारण से शिक्षा से वंचित रहे इसलिये ये दासता के बंधन से मुक्त होने का मार्ग नही ढूँढ़ सके और वे अनन्त दासता से समझौता कर लिया।

सन्तों ने पूछा - ''गुरूबाबा ! इस अधम व्यवस्था से छुटकारा पाने का सीधा और सरल उपाय क्या है ?

गुरूबाबा ने कहा - सन्तों ! इस व्यवस्था से छुटकारा पाने का सीधा और सरल उपाय है - इस व्यवस्था का संपूर्णरूप से परित्याग कर देना। जाति प्रथा तथा वर्ण व्यवस्था को नकार दो। उस सिद्धान्त तथा मान्यताओं को जो शिक्षा, शस्त्र तथा संपत्ति से वर्जित करता है, उसका परित्याग कर दो। वह धर्म जो मानव-मानव में भेद उत्पन्न करे, वर्णभेद, जाति, पाँति, शोषण, अत्याचार को बढ़ावा दे, मानव जीवन के सुखद विकास में गतिरोध एवं प्रतिरोध उत्पन्न करे उस धर्म का सर्वदा एवं सर्वथा परित्याग करना ही उचित है। स्वयं तथा देश की रक्षा के लिये शस्त्र धारण करो। स्वयं को तथा नारियों को शिक्षित करो। बिखरे समाज को इकट्ठा कर संगठित हों। कृषि की उन्नत तथा वैज्ञानिक साधन को अपनाओं जिससे सम्पत्ति अर्जित किया जा सके और गरीबी, भूखमरी तथा दरिद्रता को दूर किया जा सके। व्यापार को अपनाओं जिससे सम्पन्न बन सको। गुरूघासीदास जी ने कहा - जिन्होने हमारी प्रकृति को अच्छादित और विकृत कर रखा है; त्याग के द्वारा हम उन असत्यों पर टूट पड़ते है, उन्हें जड़ मूल से उखाड़ फेंकते है और अपने रास्ते से निकाल बाहर करते है जिससे वे हमारे जीवन के सुखद विकास को अपने दुराग्रह और प्रतिरोध से अब और न रोक सकें।

सन्तों ने पूछा - गुरूबाबा ! हमारा धर्म क्या होगा, उसका स्वरूप क्या होगा ? गुरूघासीदास जी ने कहा सन्तों ! सत्नाम ही तुम्हारा धर्म होगा। सत् ही धर्म का स्वरूप होगा। सतनाम सत्य पर आधारित धर्म होगा। असत्य पर सत्य से ही विजय प्राप्त की जा सकती है। यह लड़ाई पूर्णतः नकारात्मक तथा त्याग मूलक होगी; सत्य और अहिन्सा पर आधारित होगी। यह लड़ाई असत्यों के विरोध में है, सामाजिक असमानता और धार्मिक अंधविश्वास के विरोध में है, अत्याचार और शोषण के विरोध में है, दूषित एवं घृणित सिद्धान्तों के विरोध में है। अतः इस लड़ाई में विजय तुम्हारी होगी। असत्य पर सत्य की जीत होगी। 'सतनाम' ही धर्म होगा। सत् ही उसका स्वरूप होगा। मेरी बयालिस (४२) वाणियाँ ही धर्म की शिक्षा और सिद्धान्त होंगे। सत्स्वरूप सफेद झंडा ही सतनाम विजय-पताका कहलायेगा यह विजय-पताका, विजय स्तम्भ (जैतखाम) ही तुम्हारी विजय का प्रतीक होगा। तुम्हारी आन-बान और शान का प्रतीक होगा। तुम्हारे प्राणों से भी प्यारा होगा। यह सद्गुण, सद्ज्ञान सद्बुद्धि, सत्कर्म और सदाचरण का प्रतीक होगा। प्रिय सन्तों ! तुम सतनामी हो, सत्यभाषी हो, सन्मार्गी हो, सद्धर्मी हो, उठो ! जागो ! संगठित हों। आत्मबल को जागृत करो तुम्हें कौन

दुर्बल बना सकता है, तुम्हें कौन भयभीत कर सकता है तुम्हें दुर्बल और भयभीत बनाने वाला संसार में जो कुछ है वही पाप है और उसी से बचो। आत्मबल को जागृत करो। जान लो कि जो कोई विचार या शब्द तुम्हें दुर्बल बनाता है, एकमात्र वही अशुभ है। पिंजड़े को तोड़ डालने वाले सिंह की भांति अपने अंदर छुपे हीन भावना के बंधन को तोड़कर सदा के लिये मुक्त हो जाओ। तुम्हें किसका भय है, तुम्हें कौन बांधकर रख सकता है। अतः उठो सत्य की शक्ति को आत्मसात करो। तुम भारत के भविष्य हो। सत्य का विजय पताका तुम्हें विश्व में फहराना है।

तुम सत्य में और उसकी शक्ति के प्रभाव में बलवंत बनों। सत्य के सारे हथियार बांध लो; कि तुम असत्य की युक्तियों के सामने खड़े रह सको क्योंकि हमारा यह युद्ध व्यक्तियों से नही, परन्तु व्यक्तियों द्वारा निर्मित असत्य सिद्धान्त एवं मान्यताओं से है, उस धार्मिक अंधविश्वास से है जो मानव-मानव में भेद उत्पन्न करता है, उस सामाजिक कुरीतियों से है, रूढ़िवादिता से है, जो वर्णभेद, जाति पांति को बढ़ावा देता है, उस अज्ञानता, अविद्या और अंधकार से है जो तुम्हारे जीवन के सुखद विकास में गतिरोध और प्रतिरोध उत्पन्न करता है। इसलिये सत्य के सारे हथियार बांध लो, कि तुम बुरे दिन में सामना कर सको और सबकुछ पूरा करके स्थिर रह सको। सो सत्य से अपनी कमर कसकर, सतनामियत की झिलम पहिनकर, पावों में संगठन के जूते पहिनकर, सत् का टोप और सतनाम की ढ़ाल लेकर, मेरी वाणियों की तलवार से इस जगत् के अंधकार के हाकिमों को खत्म कर दो और सत् का सफेद विजय-पताका फहरा दो। इस प्रकार अंधकार और असत्य के बंधन से सदा के लिये मुक्त हो जाओ।

- अंतर्दृष्टि -

मनुष्य + अपेक्षा	**=**	**दुःख**	**मनुष्य + मन**	**=**	**अशांति**
मनुष्य + तुलना	**=**	**ईर्ष्या**	**मनुष्य + प्रतिस्पर्धा**	**=**	**संघर्ष**
मनुष्य + मैं	**=**	**अहंकार**	**मनुष्य + विचार**	**=**	**विभाजन**
मनुष्य + अनासक्ति	**=**	**प्रेम**	**मनुष्य + आसक्ति**	**=**	**सांसारिक प्रेम**
मनुष्य + संगठन	**=**	**परतंत्रता**	**मनुष्य + स्वतंत्रता**	**=**	**अच्छाई**
मनुष्य + होश	**=**	**ध्यान**	**मनुष्य + ध्यान**	**=**	**आत्मज्ञान**
मनुष्य + आत्मज्ञान	**=**	**मुक्ति**			

- जे. एल. चद्राकर शिक्षक
भिलाई विद्यालय, सेक्टर-2

" बाबा गुरू घासीदास के अनमोल वचन"

'TEACHINGS OF BABA GURU GHASIDAS'

1. अपने माता पिता को ही प्रथम देवी देवता मानो।
   Parents are the first worshiping idols.
2. आप भ्रम जाल, व ढ़ोंगी पन से दूर रहिये।
   Keep away yourself from arrogance.
3. पर नारी, को अपनी माता, बहन, बेटी की तरह समझो।
   Treat the women like Mother Sister or daughter.
4. अपने दुःख दर्द की तरह अन्य प्राणियों के दर्द को समझों।
   Feel the pain of other creatures of his own.
5. आप, हम, भी एक चलता, फिरता, बोलता प्राणी है पर मानव, महान, बुद्धिमान, विचारक व खोजकर्ता प्राणी हैं।
   Human beings are the only having the developed brain who can think, speak & search new things.
6. संसार की प्रत्येक जीव जन्तु पेड़ पौधे हमारे अपने जीवन की एक कड़ी व पूरक है। इसे नष्ट होने से बचाईये।
   Do not distroy the trees or greenery because these are the links of our life.
7. विशेष रूप से नारी जाति का अपमान न करो। य़ह जन्म दाइनी, गृह स्वामिनी है। माता का आदर करो।
   Do not insult the women, because she is the mother of Human beings.
8. मानव का कोई विशेष धर्म नहीं है। मानव की कोख से मानव ही जन्म लेता है। उनकी पहिचान नर अथवा नारी से ही होती है।
   Human beings are one and the same the only indentity is in the form of men are women.
9. पूरे प्राणीयों का जीवनयापन धरती पर ही है जिस पर हवा, पानी, पेड़, पौधे, फूल, फल, अन्न है। इसे किसी मानव ने नहीं बनाया। मानव केवल उपभोगकर्ता है। आकाश में रहने की कोई स्थाई जगह नही और न ही सारी उपयोगिता वहां उपलब्ध है।
   All the life is survived on the earth only, earth is natural in it self where life saving things like grains fruits, flowers etc are cultivated. Human being are only the utilisers of all these, these is no place to live in the sky or air.
10. दूधारू गाय, भैंस को हल पर मत फांदो और न उसे नाथों।
    Do not utilise the milch cattle in ploughings.

11. बैल, भैसे आदि से एक जून कार्य लो तथा उसे एक जून आराम दो।
Do not plough in the afternoon give rest to the animals.

12. पशु को खीले (आरी) से न छेंदों न गोभो।
Do not put nail in the driving stick.

13. बंदर हाथी की रहन-सहन, खान, पान व उनकी सहनशीलता, उछल, कूद, को परखिये तथा अपने खान-पान, रहन-सहन से तुलना कीजिये। (क्योंकि ये शाकाहारी हैं)।
Give the deep thinking on the behavours of animals like monkey & elephant who have great smartness and deep patience. they are herbivorus, so be strictly vegetarian.

14. हवा, पानी, चांद, सूरज, धरती, आकाश, अग्नि को किसी मानव ने नहीं बनाया। केवल इसे परखो और अपने उपयोग में लाओ।
No man has created air, water moon, sun, earth and sky they are natural. Their effects are identified and utilised.

15. उम्र के मुताबिक, विधवा विवाह का प्रचलन करो और उनकी जिंदगी को नया सवारो।
Allow and support widow marriage accordingly the age.

16. कोई भी प्राणी व वस्तु का सतगुण ही, सतनाम है।
The original quality of any thing is the satnam only.

17. कचरे में ही हीरा है, क्यों पत्थर में सिर फोड़ते रो रहे हो। (सोचों और खोजों)।
The dimond is found in dirt only i, e, the reality, why do you cry and hitting against the stone. (Think & search).

18. पेट के लिए अलाली मत करो, कुछ सच्चा कर्म करो, बाह्य आडम्बरों से बचो।
Do not be idle labour honestly. Keep away your self from arrogance.

19. किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो और उनके मांस से अपनी उदर मत भरो।
Do not kill any animal for your meal. Be vegetarian.

20. तमोगुणी भोजन व दुर्गुणों से दूर रहिये।
Do not take meals hot in nature and keep away from blemishes.

21. मृत्यु भोज मत कीजिये व लाश को मिट्टी में गढ़ाइये (जलाइये नहीं)।
Avoid death carnivals (meals) burry the dead body do not burn it.

22. मानव शरीर, आत्मा बार-बार मानव जन्म नहीं लेता।
There is no repeatition of human life, so follow the truth.

- पुरानिक लाल चेलक
ग्रा.पो. आलबरस, निकुम, जिला - दुर्ग (छ.ग.)

।। जंगल में मंगल ।।

छाता पहाड़ जंगल
जंगल में आज मंगल
होता है सब ये देखो
ऐसा दिखाने वाला ।। 1 ।।

विहड़ बिपिन ये निरजन,
निस्तब्धता थी छाई ।
अपने चरण की धूली,
रख कर दिये उजाला ।। 2 ।।

यहां न आप आते,
होती नहीं ये बातें ।
बिताए दिन वो रातें
जग राग से निराला ।। 3 ।।

जंगल में हो या झाड़ी,
पहाड़ या पहाड़ी ।
जीवन मरन दुखद की,
जड़ मूल खण्डि डाला ।। 4 ।।

सुज्ञान रवि उगाये,
सुप्तों को आ जगाये ।
दया निधि कर,
मिटाये भ्रम जाला ।। 5 ।।

उपकार चित्त लाना,
गुरू को नहीं भुलाना ।
बूलन तुम्हारे पथ के,
कांटों को कूट टाला ।। 6 ।।

- बूलनदास
ग्राम पचदेवरी
पो. आ. कपसदा जिला - दुर्ग (छ.ग.)

।। संसार ।।

जिसे संसार कहते हैं ;
जहां सब प्राणी रहते हैं ।। टेक ।।
खिसकने से नहीं चुकते,
किसी के लिये नहीं रूकते,
किसी के होना नहीं चाहते,
बूलन संसार कहते हैं ।। 1 ।।

पकड़ने को चलें जितने,
दूर होता चले उतनें,
टेकने पड़ते हैं घूटनें,
जिसे संसार कहते हैं ।। 2 ।।

यहीं सब जन्म लेते हैं,
दृष्टि गोचर जो होते हैं,
कभी हँसते भी रोते हैं,
जिसे संसार कहते हैं, ।। 3 ।।

इसी में फलते फूलते हैं ,
मुग्ध होकर मचलते हैं,
कभी गिर उठ भी चलते हैं ।
जिसे संसार कहते हैं ।। 4 ।।

कभी राजा धनी होकर,
कभी तो रंक सब खोकर,
कि दर-दर खाते हैं ठोकर,
जिसे संसार कहते हैं ।। 5 ।।

- बूलनदास
ग्राम पचदेवरी
पो. आ. कपसदा जिला - दुर्ग (छ.ग.)

गुरूघासीदासजी का चिकित्सा विधान

-दादूलाल जोशी ''फरहद''

गुरूघासीदास पर लिखने वाले प्रायः सभी विद्वानों ने चाहे वे अंग्रेज हो या फिर भारतीय दोनों ने गुरू बाबा के चमत्कारिक कृत्यों का उल्लेख किया है। जैसे भटे की बाड़ी से मिर्च तोड़कर लाना, अधर में नागर चलाना, अधर में कपड़ा सुखाना, बिना आग और पानी के भोजन पकाना इत्यादि। इसी क्रम में उनके द्वारा विभिन्न किस्म के रोगियों को स्वस्थ करना, मृत माता सफुरा एवं मृत बछिया तथा सांप के द्वारा काटे गये मनुष्य को जीवित कर देना। कोढ़ियों को स्वस्थ करना इत्यादि चमत्कारिक कार्य उनके द्वारा किये गये थे।

इन चमत्कारों पर कुछ लोग थोड़ा भी विश्वास नहीं करते हैं, कुछ लोग अपनी बुद्धि-बल से तरह तरह के वैज्ञानिक तर्क पेश करते हैं और उनका अलग तरह से व्याख्या करते हैं। कुछ लोग उसे जादूगरी मानते हैं।

मेरा मानना है कि गुरू बाबा के द्वारा किये गये सभी चमत्कार सत्य थे। वे केवल जादू का कमाल मात्र नहीं थे बल्कि वे सब उनके आंतरिक शक्ति के द्वारा किये गये सत्य कार्य थे। उनके मनोबल का कमाल था। अपनी अतीन्द्रीय शक्ति का प्रभाव दिखाने वाले इस दुनियां में केवल गुरू बाबा घासीदास जी अकेले संत नहीं थे। बल्कि उनके पूर्व भी अनेक संतो ने अपनी अतीन्द्रीय शक्ति का प्रयोग दिखा चुके थे। वैज्ञानिक आधार पर भी उनके चमत्कार को सत्य सिद्ध किया जा सकता है।

यहाँ पर गुरू बाबा के द्वारा रोग ग्रस्त, दुखी, पीड़ित व्यक्तियों का किस प्रकार चिकित्सा विधान किया गया था। उसके प्रभाव की चर्चा की जा रही है।

1. स्पर्श चिकित्सा :-

स्पर्श चिकित्सा का अर्थ है ; हाथों से छूकर रोगी को चंगा करना। गुरूघासीदास जी ने अनेक रोगियों को अपने हाथों के स्पर्श मात्र से ही निरोग कर दिया था। स्पर्श चिकित्सा के बारे में प्राचीन ग्रंथो जैसे रामायण और महाभारत मे भी उल्लेख मिलता है। युद्ध में घायल योद्धाओं को श्री कृष्ण के द्वारा स्पर्श करके स्वस्थ्य कर देने का उल्लेख आता है। प्रभु ईशु के बारे में भी लिखा गया है कि वे अनेक रोगियों को केवल स्पर्श मात्र से ही स्वस्थ कर दिये थे। आगे चल कर चीन मे इस चिकित्सा विधान पर व्यापक शोध किया गया जिसके परिणाम स्वरूप रेकी चिकित्सा पद्धति का विकास हुआ है। इस विधि में भी स्पर्श के माध्यम

से रोगी को ठीक किया जाता है। ये सब कोरी कल्पना मात्र नहीं है। बल्कि हकीकत है। दर असल मनुष्य का शरीर और मन अत्यन्त शक्तिशाली हैं। वह अपने शारीरिक और मानसिक बल के द्वारा सब कुछ कर सकता है। लेकिन शर्त यह है कि वह अपनी शारीरिक और मानसिक शक्ति को जान-समझकर उसे विधि विधान से विकसित करे। ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं जब किसी व्यक्ति ने निहत्था शेर के साथ लड़कर उसे पछाड़ दिया था। पिछली सदीं में अमरीका में कई ऐसे प्रयोग हुए हैं जब मनुष्य ने अपनी मानसिक शक्ति के द्वारा मेज और कुर्सियों को इधर से उधर खिसका दिया था।

पिछली सदीं में ही स्वामी शिवानन्द सरस्वती की पुस्तक ''थाट - पावर'' (विचार शक्ति) में किस तरह से एक मनुष्य अपने विचारों की शक्ति से किसी अन्य मनुष्य को लाभ या हानि पहुँचा सकता है, इसका सविस्तार उल्लेख किया गया था। कुछ प्रयोग भी उसमें दिया गया था।

सामान्य रूप में भी हम यह देख सकते हैं कि शरीर के अंग विशेष को स्पर्श करने से मनुष्य के अंदर किस तरह की अनुभूति पैदा होती है। विशिष्ट रूप में स्पर्श के माध्यम से मानसिक शक्ति को रोगी के शरीर में सम्प्रेषित किया जाता है; जिससे शरीर की बिमारी ठीक हो जाती है। यह वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है। गुरू घासीदास जी के द्वारा स्पर्श मात्र से रोगियों को चंगा कर देना वैज्ञानिक विधि है। वे सभी सत्य घटनाएँ है। अतः उन पर शंका करना और उसे असत्य ठहराना गलत है।

2. ध्वनि चिकित्सा विधानः-

स्पर्श चिकित्सा के साथ-साथ गुरू बाबा घासीदास जी ने ध्वनि चिकित्सा का भी विधान किया है। इसके उदाहरण है - पंथीगीत और मंगल पद। ये दो प्रकार हैं ध्वनि चिकित्सा के।

आप सोचियें आज से तीस चालीस वर्ष पूर्व सतनामियों को जिस पैमाने पर अपमानित किया जाता था उसका मन में कितना हानिकारक असर होता रहा होगा। शारीरिक पीड़ा से मानसिक पीड़ा सर्वाधिक कष्टकारी होती है। किसी व्यक्ति को लगातार मानसिक पीड़ा पहुंचाई जाती रहे तो एक स्थिति ऐसी आयेगी कि वह व्यक्ति अत्यन्त परेशान होकर विक्षिप्त हो जायेगा। वह कहीं का नही रहेगा। पूरा जीवन बर्बाद हो जायेगा। मानसिक पीड़ा का असर शरीर पर भी होता है। शरीर मे कई तरह की बीमारियां उत्पन्न हो जाती है। वैज्ञानिको ने शोध करके बता दिया है कि हृदय रोग, कैंसर रोग, पेट सम्बन्धी अनेक रोग

केवल मानसिक तनाव, दुख, संत्रास, हताशा ईर्ष्या और घृणा के अत्यधिक आवेगों से भी हो जाते हैं। अतः इस तरह के मानसिक आवेगों से बचने की सलाह दी जाती है किन्तु रोग ग्रस्त व्यक्ति केवल सलाह सुन कर इन आवेगों से मुक्त नही हो जाते हैं। सतनामी समाज के लोग इन आवेगों से अक्सर ग्रस्त रहते थे। क्योंकि प्रतिदिन, प्रतिपल सामाजिक रूप से अपमानित, प्रताड़ित होते रहते थे। इसीलिए गुरू बाबा घासीदास जी ने इस स्थिति को समझकर अपने समस्त अनुयायियों को इन हानिकारक मानसिक आवेगों से मुक्त होने के लिए पंथी गीत और मंगलपद का विधान किया है। यद्यपि ये दोनों विधि आराधना पद्धति के रूप हैं किन्तु प्रत्यक्ष रूप से इनका शरीर और मन पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है। पंथी और मंगल पद के शब्दों की शक्ति, उसे गाने की विधि या विशिष्ट ध्वनियां मिलकर एक ऐसी अलौकिक शक्ति उत्पन्न करते हैं कि सुनने वाले के तन और मन पर तत्काल असर होता है। कठोर से कठोर हृदय वाले व्यक्ति भी इन्हें सुनकर झुमने लगता है। इस तरह मानसिक आवेग तुरंत समाप्त हो जाते हैं। धीरे-धीरे शरीर के रोग भी समाप्त हो जाते हैं। पंथी और मंगलपद को प्रतिदिन नियमित रूप से सुनने पर मानसिक और शारीरिक रोग काफी हद तक ठीक हो सकते हैं और जिन्हे किसी तरह की बिमारी नहीं है वे सदा स्वस्थ रह सकते हैं। हमें यह जानकर आश्चर्य होता है कि जिन बातों को आज विज्ञान खोज करके बता रहा है उन्हे हमारे गुरूबाबा बहुत पहले से ही जानते थे। सच्चा गुरू या पथ प्रदर्शक या नेता वही हो सकता है जो अपने अनुयायियों को अपने फालोवर्स को या अपने लोगों को न केवल तन-मन और धन की सुरक्षा प्रदान करें बल्कि उन्हें शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, नैतिक और सामाजिक उन्नति की ओर ले जाये।

उनका आगामी पीढ़ियों तक कल्याण होता रहे। सचमुच गुरूघासीदास जी मात्र समाज सुधारक गुरू ही नही थे बल्कि वे साक्षात ईश्वर थे, भगवान थे। उनके विचारों, क्रियाकलापों और उपदेशों को, उनके द्वारा बनाई गई संस्कृतियों को जब गहराई के साथ समझने का प्रयास करते हैं तो वे सभी वैज्ञानिक रूप से अत्यन्त लाभकारी और सत्य प्रमाणित होते हैं।

उनके द्वारा अपने अनुयायियों के शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा के लिए दिया गया ध्वनि चिकित्सा विधान अत्यन्त अनमोल है। उनके द्वारा दिया गया शब्द ''जय सतनाम'' अपने आप में एक शक्ति शाली मंत्र ही है। हांलाकि गुरूघासीदास जी ने अपने अनुयायियों को कभी भी मंत्र-तंत्र की साधना करने की शिक्षा नही दी है। बल्कि उन्होने ऐसा करने से मना किया है। उन्होने सामान्य गृहस्थ जीवन जीने का ही उपदेश दिया है। मंत्र तंत्र

की साधना करने की नहीं। परन्तु उनके द्वारा दिया गया ''सतनाम'' शब्द इतना शक्तिशाली और चमत्कारिक है कि मंत्र जैसी शक्ति उसमें उत्पन्न हो जाती है

3. औषधि चिकित्सा विधान :-

गुरू बाबा को वनौषधियों का पूर्ण ज्ञान था। यहां तक कि किस सब्जी भाजी के खाने से शरीर में क्या प्रभाव होता है। इसका भी उन्हें ज्ञान था। यद्यपि उनके द्वारा किस वनौषधि का किस रोग मे उपयोग किया जाये इसका विस्तृत विवरण फिलहाल हमारे पास नही है तथापि यदि खोज करें तो उसका भी विवरण मिल जायेगा। उनके द्वारा गंडई क्षेत्र में कोढ़ियों को चंगा करने का प्रसंग आता है। अतः कोढ़ियों को विशिष्ट प्रकार की औषधि भी दी गई होगी। सांप के दंश से पीड़ित व्यक्ति को ठीक करने में भी उनके द्वारा खास किस्म की औषधि का प्रयोग किया गया होगा। इस तरह से प्रमाण मिलता है कि गुरू बाबा औषधि चिकित्सा के जानकार थे। हो सकता है कि उनकी सेवा भावी चिकित्सा को लोग आर्थिक लाभ के लिए प्रयोग न करें इस भावना से उन्होने किसी को उन औषधियों के बारे में न बताये हों।

खान-पान सम्बन्धी निषेध के अन्तर्गत उन्होंने सींघीभटा, और लाल भाजी को खाने के लिए मना किया था। सींघीभटा और लाल भाजी के अधिक प्रयोग से शरीर में कई तरह के विकार पैदा होते है। इसलिए ऐसी सब्जीभाजी को खाने के लिए मना किया था जिसका शारीरिक स्वास्थ्य में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो। सींघीभटा और लालभाजी के प्रयोग को मना करने के पीछे राजनीतिक और सामाजिक कारण भी थे। सन् 1740-41 ई. में नागपुर के शासक रघुजी भोसला का रतनपुर राज्य में आक्रमण हुआ था और उन्होने विजय हासिल करके छत्तीसगढ़ में अपना प्रभुत्व जमा लिया था। उस काल में काफी संख्या में मराठे ब्राम्हण छत्तीसगढ़ में आये थे और सतनामियों की सैकड़ों जमीदारियों को बलपूर्वक छीन लिये थे। जमीनों से बेदखल कर दिये थे। वे लोग सींघीभटा और लालभाजी के विशेष दीवाने थे। अतः उन शोषको को उनकी इच्छित वस्तु न मिले इसलिए सींघीभटा और लालभाजी खाने की मनाही की गई थी। जब लोग उसे खायेंगे ही नही तो उसकी खेती भी नही करेंगे। यह गुरू बाबा द्वारा शोषकों के विरोध में दी गई तात्कालिक व्यवस्था थी।

इस तरह हम देखते हैं कि गुरूबाबाघासीदास जी का चिकित्सा विधान नवीन खोज थी।

गुरूघासीदास के अनुयायी ही सच्चा सतनामी

सतनामी दो शब्दों से मिलकर बना है :- सत+नामी = सतनामी

- विष्णु प्रसाद बंजारे, नोयडा (उ.प्र.)

सत से तात्पर्य मुख्य कार्य और नामी से पहचान। जिस तरह लोहे के कार्य करने वाले को लुहार, कपड़ा धोने के कार्य करने वाले को धोबी, रखवाली करने वाले को रखवाला, गाना गाने वाले को गायक, नृत्य करने वाले को नर्तक, नशा करने वाले को नशेड़ी, जुआ खेलने वाले को जुवाड़ी, शराब पीने वाले को शराबी, पंडिताई करने वाले को पंडित, राज करने वाले को राजा, सेवा करने वाले को सेवक, तपस्या करने वाले को तपस्वी। ठीक उसी तरह जो सतकर्म करता है और जो सत्य को अपने जीवन में धारण करता है उसे ''सतनामी'' कहते हैं। अर्थात जो जैसा कार्य करता है उसे उसी नाम से जाना जाता है।

सतनामी न तो जाति है और नहीं कोई सम्प्रदाय, वह तो सतनाम के मानने वालों की पहचान है। जिसे हम आज सतनामी जाति के नाम से जानते हैं। सतनामी वह है जिसका कर्म सत्य पर आधारित हो और जो ''सतनाम धर्म'' को मानता हो। सतनाम धर्म में छोटा-बड़ा, ऊँच नीच, हुआ-छुत का कोई स्थान नहीं है। सतनाम धर्म मानवता वाद पर आधारित है। बाबा गुरू घासीदास जी ने सतनाम धर्म की व्याख्या इस रूप में की है। ''मानव-मानव एक है''।

गुरूघासीदास जी के समय सतनामियों की जनसंख्या छत्तीसगढ़ में दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही थी साथ ही उनकी एक अलग पहचान भी बन रही थी जो कि जातिवाद से एकदम भिन्न थी। उस समय लोगों को ऐसा लगता था कि पूरा छत्तीसगढ़ सतनामी-मय हो जायेगा। इन्ही सब बांतो को देखते हुए पुरातन पंथियों ने तरह-तरह के मुहिम चलाकर सतनामियों को तोड़ने का कार्य शुरू कर दिया। जैसे कृष्ण रास लीला, सतनामी को रामनामी (रमरमीहा) बनाना, सूर्यवंशी सतनामी बनाना आदि जिसमें उन लोगों को काफी सफलता भी मिली और इसी तरह यहीं से सतनामियों का अलग-अलग संप्रदायों में टूटना शुरू हो गया।

इसीलिए आज आपको सतनामी समाज में तरह-तरह के आचार-विचार, खान-पान और रीति-रिवाज को मानने वाले मिल जाएंगें। मूल सतनामी से जितने भी उप सतनामी बने उन लोगों ने अपना कार्य बदल लिया साथ ही अपना इतिहास अलग अलग तरीकों से

लिखने लगे। इसीलिए आज आपको सतनामी के ऊपर तरह-तरह के बयानों का उपयोग करते हुए मिल जाएंगें। कभी अखबार में तो कभी भाषण बाजी में, जहाँ भी मौका मिलता है सतनामियों को घृणा भरी बांतो से जरूर पुकारा जाता है, ताकि इनकी मानसिकता में छोटा-पन की बांते भरी जा सके और इन्हें हीनता का शिकार बनाया जा सके।

एक सवाल जरूर आप सबके मन में उठ रहा होगा कि सिर्फ सतनामी समाज को ही क्यों अपमानित किया जाता है ? आखिर इन लोगों ने बाकी सभी जातियों का क्या बिगाड़ा है ? आदरणीय संतो इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि सतनामी समाज एक ऐसा समाज है जो मानव द्वारा किया जाने वाला संपूर्ण कार्यों को खुद ही करता है। जैसे की पूजा-पाठ या किसी धार्मिक अनुष्ठान के कार्यो को करने के लिए किसी ब्राम्हण पंडित को नहीं बुलाया जाता बल्कि सतनामी समाज के पंडित खुद करते हैं। दूसरा ब्राम्हण वाद को नहीं मानता जैसे कि ब्राम्हण पूजनीय है लेकिन सतनामियों को छोड़कर जितनी भी जाति के लोग है ; जो हिन्दु धर्म में आते हैं वे यही मानते हैं कि ब्राम्हण पूजनीय है।

इस तरह सतनामी ''हिन्दु धर्म से अलग क्रिया-कलाप करता है जिसको हिन्दु धर्म के परंपरावादी स्वीकार नहीं करता। एक और प्रमुख कारण है जिसके कारण सिर्फ हमें ही अपमानित किया जाता है। हमारा खान-पान, रहन-सहन सभी हिन्दु धर्म के पालन हारों के समान है जैसे कि सफेद धोती-कुर्ता पहनना, टीका लगाना शाकाहारी होना, कंठी-जनेऊ पहनना आदि जो कि इन लोगों को पसंद नहीं आता और हमें सबके सामने नीचा दिखाने के लिए तरह-तरह का लांछन लगाते रहते हैं।

सतनामी लोगों को प्रारभ में दो स्थानों के नामों से जाना जाता था।

(1) रतनपुरिहा सतनामी (2) नवागढ़िया सतनामी

रतनपुरिहा सतनामी :-

रतनपुर के आस-पास के पामगढ़, सारंगगढ़, शिवरीनारायण, मल्हार, रायगढ़, सरगुजा, कटघोरा, कोरबा आदि जगहों में निवास करने वाले सतनामियों को रतनपुरिहा सतनामी कहते थे। यहां के सतनामी साधारण कद-काठी, रंग काला, सीधे-साधे और बोलचाल में सभ्य होते थे। ये लोग जैतखाम को घर या सार्वजनिक स्थान पर गड़ाते थे। ये लोग विवाह के समय कलश, बाँस के बने पर्रा-बीजना और बहु के लिए मोर मुकुट का

उपयोग करते थे। जो आज भी आपको देखने में मिल जायेगा।

नवागढ़िया सतनामी :-

नवागढ़, दुर्ग, बेमेतरा, मुँगेली, बिल्हा, लोरमी, पंडरिया, रायपुर, राजनांदगांव आदि जगहों में निवास करने वाले सतनामियों को नवागढ़िया सतनामी कहते थे। इनका रंग गोरा, नाक लंबी, मुँछे लंबी, हट्टे-कट्टे और अति साहसी प्रवृत्ति के होते थे। बोल चाल में थोड़ा कड़क व धर्म के प्रति सच्ची आस्था, अपने समाज के लिए मरने-मारने पर उतारू एवं बहुत ही परिश्रमी होते थे।

गुरूघासीदास जी के समय रतनपुरिया और नवागढ़िया सतनामी दोनों ही गुरूघासीदास जी के उपदेशों को मानते थे। उस समय के सतनामी लोगों को हम ''घासीदासी सतनामी'' का नाम दे सकते हैं। जो सतनामी उनके उपदेशों एवं बताये गये मार्गों पर चलते हैं वही सच्चा सतनामी है। बहुतायत जगहों के सतनामियों ने अपने क्रिया-कलाप, रीति-रिवाज, खान-पान सभी कुछ बदल लिये। अर्थात यह कहा जा सकता है कि इन लोगों को तोड़ने में परम्परावादियों को पूरी सफलता मिली और दूसरी बात यह है कि घासीदास जी के समय दूसरे धर्म को मानने वाले लोग बड़ी संख्या में ''सतनाम धर्म'' को स्वीकार किये थे। जिन लोगों ने सतनाम धर्म को ग्रहण किया था उन्ही लोगों को तोड़ने में परम्परावादियों ने सफलता पाई। जो लोग अपना सब कुछ त्याग कर घासीदास जी के सिद्धांत को अपनाये थे पुनः अपने पुराने रीति-रिवाज, खान-पान और रहन-सहन को अपना लिये और अपने आपको या तो कोई नया सतनामी नाम दे दिये या फिर जो धर्म या जाति को छोड़कर आये थे पुनः उसी नाम के पीछे सतनामी नाम जोड़ दिये जैसे कबीर पंथी सतनामी। आज आपको ''सात'' प्रकार के सतनामी मिलेगे। जिनका रहन-सहन, रीति-रिवाज, खान-पान सब कुछ अलग-अलग है परन्तु सतनामी कहलाते हैं।

कहावत भी है गेहूँ के साथ घुन भी पीसा जाता है ठीक उसी प्रकार घासीदासी सतनामी (''प्रमुख सतनामी'') अन्य सतनामीयों के रहन-सहन, रीति-रिवाज, खान-पान से बदनाम होता है। चूँकि घासीदासी सतनामी ही एक ऐसा सतनामी है जो कि गुरूघासीदास जी के सिद्धांतो को मानते हैं और इसलिए इन्हें ''सच्चा सतनामी'' कहा जाता है।

-------0---------

महान समाज सेवक स्व. श्री मूलचंद जांगड़े जी

- डॉ. भूषण जांगड़े , रायपुर

1. जो मानव को मानव मानता है, सेवारत रहता है, दूसरों के हित की चिन्ता करता है, चरित्रवान हो, समाज को दिशा देकर समाज का उत्थान करे, अपने हित की परवाह न कर दूसरों का दुख हरता हो, सभी से प्यार की भाषा बोलता हो ऐसे व्यक्तित्व हर युग में दुर्लभ होते हैं महान समाज सेवी स्व. मूलचंद जांगड़े जी ऐसे ही व्यक्तित्व के धनी महापुरूष थे।
2. गुरू घासीदास जी ने सतनाम धर्म के माध्मय से मानवधर्म को जन-जन तक पहुंचाने की कोशिश की थी। उनके अनुयायी बाबाजी के इस सतनाम धर्म के रूप में मानव धर्म को अपना कर अपनी सामर्थ्य से प्रवाहित करने वाले हुए और उन व्यक्तियों में से मूलचंद जी भी एक थे।
3. उन्होंने विद्यार्थी जीवन में ही गाँव गाँव जाकर महन्तों के साथ सामाजिक सुधार कार्य में लगन के साथ कार्य प्रारंभ कर दिया था।
4. 1943 में मूलचंद जी सरकारी हरिजन कर्मचारी संघ के लिपिक पद पर कार्यरत होकर सेवाएं प्रारंभ की थी। सतनामी समाज के सुधार की आवश्यकता को ध्यान में रखकर महत्व देते हुए 1945 में उस पद से इस्तीफा दे दिया और सतनामी समाज के सुधार का बीड़ा उठाया।
5. गांव-गांव में पैदल जाकर सतनामी समाज के प्रमुखों से संपर्क प्रारंभ किया और हर परगना में 5-6 चपरासियों की नियुक्ति किया ये उस परगना में चपरासियों के माध्यम से ग्राम प्रमुखों को एक गांव में इकट्ठा कर अठगवां कमेटी का निर्माण किया फिर तहसील और जिला कमेटी का निर्माण किया।
6. मुर्गी पालन करना, मछली मारना, एक पत्नी के रहते दूसरी शादी करना, बूढ़ी गाय बैल को बेचना, गांव में छुटपुट झगड़ा, सामाजिक मनमुटाव, सामाजिक विच्छेद इत्यादि त्याज्य अनेक कार्यों एवं समस्याओं का अठगवां कमेटी में निपटारा होता था।
7. 1947 में ग्राम फुरसवानी थाना डभरा तहसील सक्ती में रात्रि में सामाजिक सुधार के लिए अठगवां बैठक हो रही थी उसी समय ठाकुर प्रेमसिंह गौड़ के द्वारा द्वेषवश की गई शिकायत पर पुलिस द्वारा उन्हें गिरफ्तार किया गया और बिलासपुर जेल भेज दिया गया। क्षेत्र के सारे सतनामियों पर उसका असर हुआ जिससे डभरा थाना का घेराव किया गया। 3 मास के बाद जमानत हुई।
8. स्व. मूलचंद जांगड़े जी सक्रिय राजनीति में आये और तीन बार विधायक बने 1952 से 1967 तक लगातार विधायक रहे।
9. उन्होंने छत्तीसगढ़ में 19 छात्रावास और बालाघाट, मंडला, सागर में एक-एक छात्रावास खोलकर 1100 छात्रों को भर्ती करा कर शिक्षा के प्रति जागरूकता दिखायी।
10. उनके मन में लालच नहीं था, सेवा भाव था। सतनामी समाज के प्रति प्रेम, स्नेह था।

यही कारण है कि इतने ओहदे पर रहकर भी अपने एवं अपने परिवार के लिए धन संचय नहीं कर पाये।

11. उन्होंने 1954 से करीब पांच - छः वर्षों तक ''मुक्ति'' नामक क्रांतिकारी साप्ताहिक पत्र निकाला। यह पत्रिका साहसिक और सामाजिक विचार धारा को लेकर अंचल के हर क्षेत्र में पहुंचती थी। इस तरह उनके द्वारा ''मुक्ति'' पत्रिका के माध्यम से सम्पादन प्रकाशन का कार्य कुशलता पूर्वक किया गया।

12. छूआछूत संबंधी आन्दोलन में आदरणीय मूलचंद जी के साथ श्री रेशमलाल जी भी साथ साथ कार्य करते रहे। कई जगहों में जान से मारने का षडयंत्र भी रचा गया। ग्राम ठठारी में मूलचंद जी को रात्रि में सभा के बाद सोते समय उनके खाट को घेरने का प्रयास किया गया। इनके स्वयंसेवकों के प्रयास से उन्हें सफलता नहीं मिली।

13. ग्राम परसाडीह रायपुर से 150 कि.मी. दूर होने के बाद भी आवागमन का साधन न होने पर, दो दो नदियां जिस पर पुल का निर्माण न रहना उसे पार करना इन तकलीफदायक सफर से रायपुर पहुंचकर पढ़ाई करना और पढ़ाई के तुरन्त बाद समाज सेवा में लग जाना दुर्लभ कार्य रहा है। सामाजिक कार्य करते करते अनेक कठिनाइयों से गुजरना, अन्य बड़े समाजों के दुर्भावनावश विरोध को झेलना उनकी आदत बन गयी थी। समाज के उत्थान में उनका जो सहयोग मिला है और उनके कार्य के कारण सामाजिक आचार विचार, विद्या एवं शिक्षा के क्षेत्र में समाज को जो लाभ मिला वह सराहनीय रहा है। जांगड़े जी ने अपने अंतिम सांस तक अपने लोगों को पहंचानने में कमी नहीं की। सभी को यादकर नाम से जानना और उनके दुख दर्द की गाथा जानने की चेष्टा करना उनका स्वभाव बन गया था। जो भी उनसे कमजोर, असहाय होने पर मिलने आते थे तब मिलने वालों के यादगार प्रसंगों को उनसे पूछकर, जानकर अपने चेहरा में खुशी का चिन्ह प्रदर्शित कर प्रसन्न हो जाते थे। उन्होंने कभी दुख भरी दास्तान किसी को नहीं सुनायी। समाज के लोग उन्हें समाज का मैनेजर बना दिये थे इसीलिए उन्हें मैनेजर के नाम से लोग जानते थे।

14. जो व्यक्ति उनसे सम्पर्क करते थे वे उनके व्यवहार से, उनके आचरण से, उनके कार्यों की पद्धति से और उनकी आत्मीयता से प्रभावित हुए बगैर नहीं रहते थे। वे जांगड़े जी के उपकार को कभी भूल नहीं पाते। जो भी लोग जांगड़े जी को याद करते हैं तब बहुत सी बातें उनके स्मरण में दाखिल हो जाती हैं। कई लोग उनकी याद को चिरस्मरणीय बनाये रखने के लिए अपने पूजा स्थल में उनके चित्र को रख कर पुष्पांजलि चढ़ाते हैं।

15. छत्तीसगढ़ वासियों के लिए भोपाल में सहायता करने वाला एक ही मसीहा मूलचंद जी थे। उनके लिए कोई भी समाज, कोई भी जाति, कोई भी धार्मिक व्यक्ति समान निष्ठा के पात्र थे। किसी से कोई भेद नहीं किसी से कोई दुराव नहीं। सबको समान समझकर चलने वाला यह व्यक्ति स्व. मूलचंद जांगड़े जी महान थे। सतनामी समाज के गौरव थे। अमूल्यरत्न थे।

- प्रतिनिधि को पत्र का शेषभाग

हैं। इसके लिए जितनी भी कठिनाई आये हम उनका सामना करेंगे और अपने पथ पर निरंतर चलते रहेंगे।

इस वर्ष (सन् 2005 में) सत्यध्वज के कुल चार अंक 47, 48, 49 और 50 प्रकाशित होंगे। अंक पचासवाँ स्वर्ण अंक होगा। इसलिए हमने वर्ष 2005 को सत्यध्वज का ''स्वर्ण अंक वर्ष'' घोषित किया है। यह अंक श्रेष्ठ, सारगर्भित, आकर्षक और संग्रहणीय बने इसके लिए हम सबको अभी से परिश्रम करना होगा। वार्षिक सहयोग राशि (100/- रूपये प्रति सदस्य) जल्द से जल्द एकत्रित करना है। चूंकि अंक पचासवां दिसम्बर 2005 में प्रकाशित होगा। वह समय गुरू बाबा की जयंती का अवसर होगा। अतः समाज के जागरूक और समर्पित भावना वाले सभी भाई-बहनों से पचासवां अंक के लिए बधाई एवं शुभकामना संदेश के रूप में विज्ञापन राशि प्राप्त करने का प्रयास करना है। हमारे समाज में बहुत से श्रद्धालु सज्जन है; जो साहित्य एवं संस्कृति के लिए सहर्ष दान देना चाहते हैं। ऐसे सज्जनों के पास जाकर अधिक मात्रा में दान राशि प्राप्त करना है। जिससे अंक पचासवां (स्वर्ण अंक) का स्तरीय प्रकाशन हो सके। लेखकों और चिन्तकों से रचनाएं (लेख, कविताएं, कहानी, जीवनी, भेंटवार्ता इत्यादि) संकलित करके शीघ्र भेजने का प्रयास करना।

भाई कोमल ! हमे़शा याद रखना आदमी की पहचान उसके जनहित के कार्यों से होती है। धन, दौलत, पद और कुल से नहीं। जो छल-छिद्र और कपट भाव से दूर रह कर समाज हित में निःस्वार्थ सेवा करता है। निरंतर कार्य में लगा रहता है; उसका ही नाम सदा-सदा के लिए अमर हो जाता है।

देखो ! पत्र काफी लम्बा हो गया है। अब इति करने की इच्छा हो रही है। गुरू घासीदास सेवा समिति के अध्यक्ष आदरणीय श्री सी. आर. सोनवानी जी सहित सभी सामाजिक भाईयों और बहनों को मेरा जय सतनाम कहना।

किसी तरह की परेशानी हो तो तुरंत सूचित करना। पत्रोत्तर देते रहना।

गुरूघासीदास जी तुम्हे सदैव शक्ति और साहस देते रहें, और तुम सफलता की सीढ़ियां नित चढ़ते रहो, इन्ही शुभकामनाओं के साथ ...

तुम्हारा शुभाकांक्षी-

दादूलालजोशी ''फरहद''

सम्पादक ''सत्यध्वज''

परिचय

सत्यध्वज के वरिष्ठप्रतिनिधि

नाम - डॉ. देवनारायण अनंत

पिता - श्री राम प्रसाद अनंत

माता का नाम - श्रीमती समुन्द्री देवी

जन्म - 05.06.1971

जन्म स्थान - पेन्ड्री (ज)

शिक्षा - I.M.S.C.A., B.A.M.S., M.D. (A)
DMLT, DMRT and E.C.G. टेक्नालॉजी

व्यवसाय - नौकरी

रूचियां व अनुभव - समाज सेवा व अध्ययन पिछले 10 वर्षों से सामाजिक कार्यों में संलग्न व बचपन से परम पूज्य गुरू घासीदास व बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर मिशन में कार्यरत। अखिल भारतीय अनुसूचित जाति जनजाति पिछड़ा वर्ग व अल्पसंख्यक कर्मचारी कल्याण संघ (नई दिल्ली) का सक्रिय कार्यकर्त्ता

वर्तमान पता - Type II D/S CWS मकान नं. –692 बचेली
फोन : 07857–255895

स्थायी पता - ग्राम –पेन्ड्री (ज) पो. आ. – जरेली

जिला - बिलासपुर (म.प्र.) 495335

प्रतिनिधि - सत्यध्वज का सन् 1998 से

प्रेरणास्त्रोत - माता पिता रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया के कार्यकर्त्ता गण, बामसेफ, डी.एस.फोर. बहुजन समाज आदि के समर्पित कायकर्त्ता गण।

प्रकाशन - दलित वायस, नवभारत, दैनिक भास्कर, सत्यध्वज, सत्यालोक बहुजन संगठक सहित अनेक पत्र–पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित।

पद/जिम्मेदारी - (1) फूले अंबेडकर विचार मंच के अध्यक्ष।
(2) अनुजाति/जनजाति कर्मचारी कल्याण समिति के कोषाध्यक्ष।
(3) गुरूघासीदास सेवा समिति किरन्दुल के संगठन सचिव।
(4) सत्यध्वज और सत्यालोक के प्रतिनिधि।

समाज को संदेश - उच्चशिक्षा प्राप्त कर भारत के मशीहाओं एवं वीरागनाओं के बताये रास्ते पर चलकर उनके आन्दोलन को मंजिल तक पहुंचाये।

मुद्रक :– आशा ऑफसेट प्रिंटर्स, सुपेला, भिलाई फोन : 5030566